आई एस एस एन : 0972-169X
पंजीयन क्रमांक 70269/98 के अंतर्गत भारत सरकार के समाचार पत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा पंजीकृत
डाक पंजीयन क्रमांक : डी एल : 11360/2005

विज्ञान प्रसार की मासिक पत्रिका

ड्रीम 2047

दिसम्बर 2005 | खण्ड 8 | अंक 3 | मूल्य रुपए : 5.00

विज्ञान प्रसार समाचार

इस अंक में

संपादकीय (पृष्ठ 2)

हेंड्रिक एंटून लोरेन्ट्स (पृष्ठ 3)

क्वांटम भौतिकी का विचित्र संसार (पृष्ठ 6)

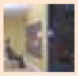

मूत्र–पथ के संक्रमण को मात (पृष्ठ 12)

प्रकाश का यथार्थ मापन (पृष्ठ 15)

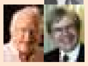

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की अभिनव उपलब्धियां (पृष्ठ 17)

विज्ञान प्रसार समाचार (पृष्ठ 18)

प्रोफेसर ए.के. रायचौधरी और प्रोफेसर पी.सी. वैद्य पर बनी फिल्मों का विमोचन

प्रो. ए.के.रायचौधरी और प्रो. पी.सी.वैद्य के जीवन और कार्य पर 'विज्ञान प्रसार' ने पुणे स्थित 'इण्टरयूनिवर्सिटी सेण्टर फॉर एस्ट्रोनोमी एण्ड एस्ट्रोफिजिक्स' (आइयुका) के साथ संयुक्त रूप से प्रसिद्ध भारतीय खगोल भौतिकीविदों – प्रो. ए.के. रायचौधरी और प्रो. पी.सी. वैद्य के जीवन और कार्यों पर दो फिल्में 'विश्व भौतिकी वर्ष–2005' की गतिविधियों के अन्तर्गत निर्मित की हैं। भारत के इन दोनों महान खगोल भौतिकीविदों ने 'सामान्य आपेक्षिकता और गुरुत्व' के क्षेत्र में मूलभूत योगदान किया है। स्वतंत्रता से पूर्व के भारत में प्रो. रायचौधरी और प्रो. वैद्य ने अनेक प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करते हुए कालेजों और विश्वविद्यालयों में भौतिकी पढ़ाने के साथ–साथ अपना शोधकार्य भी आगे बढ़ाया।

प्रो. पी.सी. वैद्य का प्रो. जयन्त नारलीकर द्वारा पुष्प–गुच्छ से स्वागत

प्रो. रायचौधरी ने आइंस्टीन के समीकरण की गतिकी (डाइनेमिक्स) को और भी स्पष्ट करते हुए नये समीकरण की रचना की जिसे 'रायचौधरी इक्वेशन' के रूप में मान्यता मिली। यह समीकरण एक ओर यूनिवर्सिओन की गतिकी और दूसरी ओर 'ब्लैक होल' की व्याख्या प्रस्तुत करता है। जब तक 'सामान्य आपेक्षिकता का सिद्धांत' मान्य है, तब तक 'रायचौधरी समीकरण' भी मान्य रहेगा। कोलकाता के प्रेसीडेंसी कालेज में कार्य करते हुए पचास के दशक के मध्य में प्रो. राय चौधरी ने अपने ही बलबूते पर इस समीकरण की खोज की थी। यह सबसे अलग–थलग अकेले उनका ही योगदान था। ब्रह्माण्ड की संरचना पर कार्य करते हुए सुप्रसिद्ध ब्रह्माण्ड विज्ञानी प्रो. जयन्त नारलीकर ने भी प्रोफेसर ए.के. रायचौधरी के महान शोधकार्य से प्रेरणा ली थी। प्रो. रायचौधरी पर बनाई गई इस फिल्म की पूरी शूटिंग जुलाई 2005 में पूरी कर ली गई थी। लेकिन दुर्भाग्य से प्रो. रायचौधरी इस फिल्म को देख नहीं पाए क्योंकि 8 जून 2005 को उनका निधन हो गया था। अतः यह फिल्म अब इस महान वैज्ञानिक के प्रति 'विज्ञान प्रसार' की विनम्र श्रद्धांजलि बन गई है।

प्रो. ए.के.रायचौधरी

आइंस्टीन के समीकरण की सुप्रसिद्ध व्याख्या 'स्वार्जचाइल्ड सोल्यूशन' को माना जाता है, जिसमें किसी 'द्रव्यमान बिन्दु' यानी ब्लैक होल के गुरुत्व–क्षेत्र का विवरण प्रस्तुत किया गया है। यह 'द्रव्यमान बिंदु' समीकरण लिखने के तुरंत बाद में प्रेक्षित किया गया था। लेकिन तारे कभी निष्क्रिय नहीं रहते। वे निरंतर विकिरण उत्सर्जित करते हैं। प्रोफेसर पी.सी. वैद्य का शोधकार्य इसी वास्तविक स्थिति से संबंधित है। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में प्रोफेसर वी.वी.नारलीकर के साथ कार्य करते

शेष पृष्ठ 19 पर जारी

...वैज्ञानिक ढंग से सोचें, वैज्ञानिक ढंग से करें ... वैज्ञानिक ढंग से सोचें, वैज्ञानिक ढंग से करें ... वैज्ञानिक ढंग से सोचें, वैज्ञानिक...

विज्ञान प्रसार के लिए डॉ. सुबोध महंती द्वारा सी–24, कुतुब इंस्टीट्यूशनल एरिया, नई दिल्ली 110 016 से प्रकाशित तथा उन्हीं की ओर से एस. नारायण एंड संस, बी–88, ओखला इंडस्ट्रीयल एरिया फेस – 2, नई दिल्ली 110 020 द्वारा मुद्रित
सम्पादक : डॉ. विनय बी. काम्बले

बर्ड–फ्लू : पंखों पर से आता आतंक

विपदाओं से राहत का कोई रास्ता नहीं दिखाई देता, न सुनामी से, न तूफान, बाढ़, ज्वार की ऊंची लहरों, भूकंप – यहां तक कि आतंकवाद से भी नहीं। ये विपदाएं आती हैं और भयानक विनाश की, दु:ख, गरीबी व मौत की करुण कहानी छोड़ जाती हैं। इनका सामना करने के लिए तैयारियों की कमी के कारण भी ये हमारी विफलता की कहानियां कह जाती हैं। अब एक और विपत्ति हमारे सामने आ खड़ी हुई है जो हमारे ही जैवमंडल के पंख वाले सदस्यों अर्थात् पक्षियों द्वारा फैल सकती है। ठंडे इलाकों से प्रवासी पक्षी अपनी वार्षिक यात्रा पर अपने उष्ण कटिबंधी डेरों में आने लगे हैं। इनमें भारत भी शामिल है। क्षितिज पर उड़ते हुए प्रवासी पक्षियों को देखना बहुत सुखद अवश्य लगता है। लेकिन, हो सकता है यह पक्षी विषाणु (वाइरस) के वाहक हों– इंफ्लुएंजा के H5 N1 प्रजाति के घातक विषाणु के वाहक, जो थोड़े ही समय में लाखों लोगों को मौत की नींद सुला सकता है।

लेकिन, पक्षियों में पाया जाने वाला इंफ्लुएंजा अर्थात् 'फ्लू' का यह विषाणु मनुष्यों के लिए इतना घातक क्यों बन सकता है? जब इंफ्लुएंजा की तमाम प्रजातियों में से जंगली व पालतू पक्षियों में फैलने वाली कोई प्रजाति अपना रूप बदल लेती है जिसका आक्रमण मनुष्य पर भी हो सकता है तो उसके कारण देशव्यापी या विश्वव्यापी महामारी फैल सकती है। विषाणु का और अधिक अनुकूलन हो सकता है, यहां तक कि मनुष्यों में फ्लू फैलाने वाले विषाणु की किसी प्रजाति के साथ उसके जीनों का आदान–प्रदान भी हो सकता है। इस जोड़–तोड़ से ऐसा नया रोगाणु जन्म लेता है जो मनुष्यों में भयंकर संक्रामक रोग फैला सकता है। फ्लू की भयानक महामारी एक शताब्दी में कुल 3–4 बार फैलती है, मतलब मनुष्य की हर पीढ़ी के जीवनकाल में एकाध बार! पिछली महामारियां 1918,1957 और 1968 में फैली थीं।

1918 में विषाणु की H5 N1 प्रजाति से फैली इंफ्लुएंजा की महामारी ने विश्व भर में 4 करोड़ मनुष्यों की जान ली! 1957 में H2 N1 प्रजाति से फैली महामारी ने दुनिया भर में 10–40 लाख और H3N1प्रजाति ने 1968 में 10 लाख लोगों की जान ली। लेकिन, इंफ्लुएंजा इतना खतरनाक रोग क्यों है? इंफ्लुएंजा विषाणु बस लगभग दो दिन की इंकुबेशन अवधि के बाद पहले श्वसन तंत्र के ऊपरी हिस्से और वायु स्थानों पर आक्रमण करता है। तब 4–5 दिन तक शरीर का तापमान 104 डिग्री फारेनहाइट तक हो जाता है। इंफ्लुएंजा के कारण शरीर की रोगों से लड़ने की क्षमता कम हो जाती है। इस कारण रोगी के शरीर पर अन्य रोगाणुओं का हमला हो सकता है जिससे फेफड़ों पर न्यूमोनिया जैसे दूसरे संक्रमण भी हो सकते हैं। और, असलियत में इंफ्लुएंजा से होने वाली मौत का मुख्य कारण न्यूमोनिया का यही द्वितीय संक्रमण होता है।

एशिया और यूरोप में फैलते बर्ड–फ्लू से भारी डर का माहौल बन गया है। लेकिन, फिलहाल इस रोग से पक्षी ही बीमार पड़ रहे हैं। मनुष्य बहुत कम पीड़ित हुए हैं। इस समय पक्षियों में जो H5 N1 विषाणु रोग फैला रहा है उसका जन्म 2003 में दक्षिण कोरिया में हुआ था। बर्ड–फ्लू से अब तक 64 मनुष्यों की मृत्यु की पुष्टि हुई है। लेकिन, अगर विषाणु ऐसे रूप में बदल जाय जिससे मनुष्यों में ही आपस में यह रोग फैलने लगे तो उससे बड़ी संख्या में जानें जा सकती हैं और अरबों रूपए का आर्थिक नुकसान भी हो सकता है। इसलिए बर्ड–फ्लू के इस H5 N1 विषाणु पर नियंत्रण करना अनिवार्य हो गया है।

अनुमान है कि पक्षियों और अन्य प्राणियों से मनुष्यों में फैलने वाले रोगों के लगभग आधे रोगाणु वन्य जीवों में पाए जाते हैं। जंगली या पालतू जानवरों तथा पक्षियों के साथ अस्वास्थ्यकर परिस्थितियों में मनुष्यों के हिलने–मिलने से रोग का विषाणु प्राणियों की एक जाति से दूसरी जाति में फैल जाता है। एक ही जगह कई तरह के प्राणियों की भीड़ और उनका बाजार लगने पर हालात और बिगड़ सकते हैं। ऐसी हालत में बर्ड–फ्लू का विषाणु मनुष्यों में महामारी की तरह फैल सकता है।

मगर तरह–तरह के विषाणु पुनः पुनः कहां से पैदा हो जाते हैं? इसका एक मुख्य कारण यात्रा के लिए मनुष्यों की आवाजाही, जमीन के उपयोग, पर्यावरण अथवा कृषि में बदलाव है। दुनिया में कई तरह के बदलाव आ रहे हैं जिनका असर रोगाणुओं पर भी पड़ता है और इन बदलावों से उन्हें नई जातियों पर आक्रमण करने या नए इलाकों में पहुंचने का भी मौका मिलता है। विषाणु से होने वाला सांस का वह भयानक 'सार्स' रोग आपको याद होगा जो 2003 में अन्य प्राणियों से मनुष्यों में फैला था और जिसने करीब दो दर्जन देशों में 800 मनुष्यों की जान ले ली थी। इसके तेजी से फैलने का एक कारण अंतरराष्ट्रीय स्तर पर यात्रा करना भी माना जाता है। इन विषाणुओं के पैदा होने और पुन: पुन: प्रकट होने का कारण शहरीकरण, भारत तथा अन्य उष्णकटिबंधी विकासशील देशों में आबादी की भीड़ का बढ़ना और पक्षियों व प्राणियों की आवाजाही और उनका व्यापार भी है।

बर्ड–फ्लू का H5 N1 विषाणु मनुष्य पर आक्रमण करने वाले अब तक खोजे गए 1400 रोगाणुओं में से एक है। कहा जाता है, इनमें से 13 प्रतिशत रोगाणु तो पुन: प्रकट हो रहे हैं जिसकी वजह से 'सार्स' या 'एच आइ वी' रोग फैले। यक्ष्मा (टी बी) व मलेरिया जैसे कई रोगों के विषाणु पुन: प्रकट हो रहे हैं। चिंता का विषय यह है कि नए विषाणुओं की संख्या काफी बढ़ रही है। हाल के अनुसंधान से पता लगा है कि पिछले 50 वर्षों में मनुष्य पर आक्रमण करने वाले रोगाणु कम से कम 409 बार प्रकट या पुन: प्रकट हो चुके हैं। यह महत्वपूर्ण है कि काफी मात्रा में प्राणियों और पक्षियों से मनुष्यों में रोग फैलते हैं।

अब, सवाल यह है कि हम बर्ड–फ्लू के संभावित खतरे को कम कैसे करें? मुर्गियों की बड़ी संख्या पर नजर रखना और बर्ड–फ्लू के फैलने पर उसकी रोकथाम करना काफी हद तक कम खर्चीला सिद्ध हो सकता है। अब तक यह रोग लाखों पक्षियों में फैल चुका है और 15 करोड़ मुर्गियों को मारा भी जा चुका है। इसके बावजूद इंडोनेशिया, वियतनाम, कम्बोडिया, चीन, थाइलैंड और शायद लाओस में भी H5 N1 विषाणु फैल चुका है। संक्रमण विषाणु की निगरानी, पशुचिकित्सा व पशु स्वास्थ्य की देखभाल और प्रयोगशाला सेवाओं से इस खतरे को काफी हद तक कम करने में मदद मिल सकती है।

शेष पृष्ठ .....5 पर जारी

सम्पादक : विनय बी. काम्बले
पत्र व्यवहार के लिए पता : **विज्ञान प्रसार** सी–24 कुतुब इंस्टीट्यूशनल एरिया, नई दिल्ली–110016
दूरभाष : 26864157, फैक्स : 0120–2404437
ई–मेल : *info@vigyanprasar.gov.in*
वेबसाइट : *http://www.vigyanprasar.com*

"ड्रीम 2047" में प्रकाशित लेखों/प्रलेखों में व्यक्त लेखकों के कथनों, मतों व सुझावों के लिए विज्ञान प्रसार किसी भी रूप मे उत्तरदायी नहीं है।

"ड्रीम 2047" मे प्रकाशित लेखों के अंश, सौजन्य/साभार के साथ पुनर्प्रकाशित/उद्धृत किये जा सकते हैं।

हेंड्रिक एंटून लोरेन्ट्स

अपने समय का अत्यंत सम्मानित वैज्ञानिक

❑ सुबोध महंती
ई–मेल : mahantisubodh@yahoo.com

"हर कोई उनकी (लोरेन्ट्स की) श्रेष्ठता का कायल था, लेकिन उनसे किसी तरह का दबाव महसूस नहीं करता था। उन्हें लोगों और मानव व्यवहार के बारे में कोई गलतफहमी नहीं थी बल्कि वे हर किसी से और हर चीज से प्यार करते थे। वे किसी पर धौंस नहीं जमाते थे बल्कि सदा सेवा और मदद करने को तत्पर रहते थे। वे अत्यधिक कर्तव्यनिष्ठ थे और किसी भी चीज का फालतू महत्व उन्हें स्वीकार नहीं था। उनके स्वभाव में विनोदप्रियता थी जो उनकी आंखों और मुस्कुराहट में झलकती थी।"

– अल्बर्ट आइंस्टीन

"...... लोरेन्ट्स को सभी सैद्धांतिक भौतिकीविद् विश्व का अग्रणी मनीषी मानते थे जिन्होंने पूर्ववर्ती वैज्ञानिकों के शेष रह गए कामों को पूरा किया और नए विचारों के लिए आधार भूमि तैयार की ...... लोरेन्ट्स में तमाम व्यक्तिगत खूबियां थीं। उनमें निःस्वार्थ सेवा भावना थी और जो भी उनके सम्पर्क में आया उन्होंने उसमें गहरी रुचि ली। उन्होंने अपने हम उम्र अग्रणी व्यक्तियों और आम आदमियों का भी प्यार अर्जित किया।"

– नोबेल फाउंडेशन

"उन्होंने (लोरेन्ट्स) अपने जीवन की हर बारीकी को उत्कृष्ट कला के नमूने के रूप में ढाला। उनकी दयालुता, उदारता, न्यायप्रियता के साथ ही लोगों और मानव व्यवहार की गहरी व सहज अनुभूति के कारण उन्होंने जिस क्षेत्र में भी कदम रखा– उसमें वे आगे ही रहे। हर कोई खुशी से उनका अनुकरण करता था क्योंकि लोग जानते थे कि वे किसी को दबाने के बजाय सेवा करने में विश्वास रखते हैं। उनका काम और उनका अपना उदाहरण कई पीढ़ियों के लिए अंतःप्रेरणा और आशीर्वाद का सबब बना रहेगा।"

– अल्बर्ट आइंस्टीन

हेंड्रिक एंटून लोरेन्ट्स अपने समय के अत्यधिक सम्मानित वैज्ञानिक थे। उन्होंने भौतिकी के विविध क्षेत्रों में काम किया। फिर भी, विद्युत–चुंबकत्व में उनका महत्वपूर्ण योगदान है। मैक्सवेल की खोज की सीमाओं के भीतर रहते हुए लोरेन्ट्स ने पूरी तरह विद्युत्–चुंबकत्व की संकल्पनाओं पर आधारित भौतिकी के एक सार्वभौमिक सिद्धांत का विकास किया। उनके विचार यांत्रिक नियमों से बिल्कुल अलग थे जिन्हें उन्होंने सन् 1895 में डच भाषा में प्रकाशित अपने शोध लेख 'गतिशील वस्तुओं की वैद्युत तथा प्रकाशीय घटना के सिद्धांत का अध्ययन' में प्रस्तुत किया। लोरेन्ट्स ने विद्युत–चुंबकत्व की व्याख्या पहली बार ठोस वैक्टर नोटेशन से पांच समीकरणों में की। पहले चार समीकरणों में मैक्सवेल के सिद्धांत का सहारा लिया गया लेकिन पांचवे समीकरण में विद्युत से संबद्ध सतत क्षेत्र की व्याख्या की गई। इसे लोरेन्ट्स बल कहा गया। उनकी खोजों से आधुनिक भौतिकी के विभिन्न क्षेत्रों में नई प्रगति हुई। लोरेन्ट्स उन वैज्ञानिकों में थे जिन्होंने सबसे पहले इलेक्ट्रॉन के अस्तित्व की घोषणा की। उन्होंने चुंबकीय क्षेत्र में वर्णक्रम–रेखाओं के परिवर्तन संबंधी जेमान प्रभाव की भी व्याख्या की। लोरेन्ट्स ने जार्ज फ्रैंसिस फिट्ज़रेल्ड (1851–1901 ई.) की इस परिकल्पना को आगे बढ़ाया कि जब कोई वस्तु किसी दिशा में गतिशील है तो उस दिशा में उसका आकार संकुचित हो जाता है। अब यह परिकल्पना लोरेन्ट्स संकुचन कहलाती है। लोरेन्ट्स रूपांतरण भी उनकी देन हैं जिन्हें उन्होनें सन् 1904 में प्रस्तुत किया। ये कुछ गणितीय समीकरण हैं जो किसी गतिशील प्रणाली के दिक् व काल निर्देशांकों के किसी अन्य प्रणाली के ज्ञात दिक् व काल के सहसंबंध को दर्शाते हैं। लोरेन्ट्स रूपांतरणों ने माइकेल्सन तथा मोरले के प्रयोग की व्याख्या की। इनसे प्रकाश के वेग के लगभग बराबर गतिशील वस्तु की लंबाई घटने, द्रव्यमान बढ़ने तथा समय के विस्फारण (टाइम डिलेशन) की भी व्याख्या की जा सकी। उनके इस कार्य की चर्चा हुई और आइंस्टीन के विशेष आपेक्षिकता सिद्धांत से इसकी पुष्टि हो गई। लोरेन्ट्स ने यूरोप में सैद्धांतिक भौतिकी को शिक्षा के एक विषय के रूप में मान्यता दिलाने में भी अहम भूमिका निभाई। उन पर आगस्टिन ज्यां फ्रेनेल (1788–1827 ई.) के काम का गहरा प्रभाव पड़ा। उनका कहना था कि फ्रेनेल के काम से उनके अपने विचारों और दृष्टि में स्पष्टता आई।

हेंड्रिक एंटून लोरेन्ट्स

प्रथम विश्वयुद्ध के बाद लोरेन्ट्स ने वैज्ञानिकों के बीच अंतरराष्ट्रीय सहयोग को मजबूत बनाने के लिए कड़ी मेहनत की। विश्व भर के वैज्ञानिकों के बीच अपनी अविवादित प्रतिष्ठा और आदर के कारण उन्हें इस दिशा में बड़ी सफलता मिली। जीवन के अंतिम वर्षों में उन्होनें राष्ट्र संघ की बौद्धिक सहयोग समिति के अध यक्ष के रूप में कार्य किया। वे ब्रुसेल्स में आयोजित भौतिकी के प्रथम शॉल्वे सम्मेलन के अध्यक्ष चुने गए और जीवन भर इस सम्मेलन का अध्यक्षता करते रहे।

ओवेन विलियम्स रिचर्डसन (1879–1959 ई) ने लोरेन्ट्स के बारे में कहा है कि वह "विलक्षण बौद्धिक शक्तियों का धनी थे ...जो यद्यपि अपने अन्वेषण में पूरी तरह डूबे रहते थे लेकिन ब्रहमांड के हर हिस्से में उसके भावी उपयोग के बारे में भी जानते थे उनके लेखों की साफगोई से उनकी इन अद्भुत मानसिक क्षमताओं का पता लगता है .... उन्होंने वैचारिक विमर्श में अपनी मानसिक क्षमताओं का उपयोग किया।

उनमें कठिनाईयों का सामना करने और उपयुक्त विषयों पर चर्चा करने की अंतरदृष्टि थी और, यह सब उन्होंने इतनी निपुणता से किया कि प्रत्यक्ष रूप से इसका पता भी नहीं चल सकता।"

लोरेन्ट्स का जन्म 18 जुलाई 1853 को अर्नहेम, नीदरलैंड में हुआ था। उनके पिता का नाम गेरिट फ्रेडरिक लोरेन्ट्स था। 13 वर्ष की उम्र तक लोरेन्ट्स ने टिमर प्राइमरी स्कूल, अर्नहेम में पढ़ा और फिर सन् 1866 में अर्नहेम में ही नए खुले हाईस्कूल में प्रवेश लिया। सन् 1870 में उन्होंने लीडेन विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया और सन् 1872 में वहां से गणित व भौतिकी में बी.एस–सी. की डिग्री हासिल की। उसके बाद लोरेन्ट्स अपने निवास क्षेत्र अर्नहेम लौट आए और सायंकालीन कक्षाओं में पढ़ाने लगे। विश्वविद्यालय से लौट आने के बाद भी वे अपनी डाक्टरेट की डिग्री के लिए अध्ययन करते रहे।

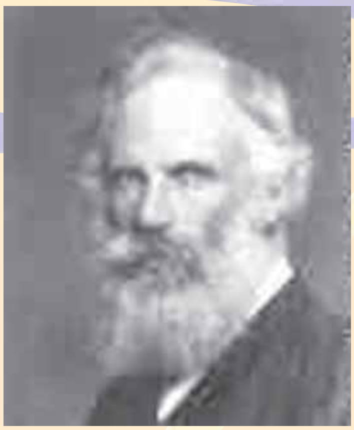

जार्ज फ्रैंसिस फिट्जेराल्ड

लोरेन्ट्स ने सन् 1875 में लीडेन विश्वविद्यालय से पी.एच–डी. की उपाधि अर्जित की। तब उनकी उम्र केवल 22 वर्ष थी। अपने पी.एच–डी. के शोध प्रबंध के लिए अनुसंधान कार्य में लोरेन्ट्स ने क्लार्क मेक्सवैल के विद्युत्–चुंबकत्व के सिद्धांत में सुधार किए। उन्होंने प्रकाश के परावर्तन तथा अपवर्तन की बेहतर व्याख्या प्रस्तुत की। उनकी डॉक्टरेट के शोध प्रबंध का शीर्षक था: 'प्रकाश के परावर्तन तथा अपवर्तन का सिद्धांत।' डॉक्टरेट डिग्री अर्जित कर लेने के बाद भी लोरेन्ट्स घर पर ही रहते थे। उन्होंने कोई व्यावसायिक काम शुरू नहीं किया। इसका कारण यह था कि वे तय नहीं कर पा रहे– आगे भौतिकी में काम करें या गणित में। उन दिनों शिक्षा में सैद्धांतिक भौतिकी की स्थिति एक अलग–थलग विषय के रूप में थी। यह अभी एक सुस्थापित वैज्ञानिक विषय नहीं बना था। सन् 1878 में मात्र 25 वर्ष की उम्र में लोरेन्ट्स को लीडेन विश्वविद्यालय में गणितीय भौतिकी का प्रोफेसर नियुक्त किया गया। यह हालैंड में सैद्धांतिक भौतिकी की प्रथम पीठ थी जिसका सृजन पहली बार उन्हीं के लिए किया गया। वे सन् 1912 में अवकाश प्राप्त करने तक लीडेन विश्वविद्यालय में ही रहे। हालांकि, उन्हें विदेशों से शैक्षिक नियुक्तियों के कई आमंत्रण मिले। अब, लोरेन्ट्स ने विद्युत, चुंबकत्व तथा प्रकाश के आपसी संबंधों की व्याख्या करने के लिए केवल एक सिद्धांत का विकास करने में अपना पूरा ध्यान केन्द्रित कर दिया। ऐसे एकीकृत सिद्धांत का विकास करने के पीछे उनका मुख्य उद्देश्य क्लार्क मैक्सवैल के विद्युत–चुम्बकीय सिद्धांत में सुधार करना था ताकि वैद्युत–चुंबकत्व और प्रकाश के आपसी संबंध की व्याख्या की जा सके। उन्होनें यह विचार सामने रखा कि शायद परमाणुओं में आवेशित कण हो सकते हैं (बाद में वे इलेक्ट्रॉन कहलाए) और उन कणों के दोलन से प्रकाश उत्पन्न होता है। लोरेन्ट्स के आवेशित कणों के सिद्धांत से यह बात सामने आई कि अगर ऐसा है तो चुंबकीय क्षेत्र का इन दोलनों पर प्रभाव पड़ना चाहिए। इसका मतलब, प्रकाश की आवृत्ति पर भी इसका प्रभाव पड़ना चाहिए। लोरेन्ट्स ने सन् 1899 में 'इलेक्ट्रॉन' शब्द का प्रयोग किया और कैथोड–किरणों में इलेक्ट्रॉन कणों की उपस्थिति बताई। उन्होंने यह दर्शाया कि इलेक्ट्रॉन के कंपनों से कैसे मेक्सवैल की विद्युत्–चुंबकीय तरंगें पैदा होती हैं। सन् 1896 में लोरेन्ट्स ने पीटर जीमान (1865–1943 ई.) के साथ मिलकर जेमान प्रभाव की व्याख्या की। चुंबकीय क्षेत्र में परमाण्विक वर्णक्रमीय रेखाओं के पृथक होने की क्रिया जीमान प्रभाव कहलाती है। इस कार्य के लिए उन दोनों को सन् 1902 के भौतिकी के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। लोरेन्ट्स का इलेक्ट्रॉन सिद्धांत बहुत सफल रहा लेकिन प्रकाश–विद्युत् प्रभाव की व्याख्या जब इससे न हो सकी तो क्वांटम सिद्धांत की आवश्यकता पड़ी।

अल्बर्ट अब्राहम माइकेल्सन (1852–1931ई.) तथा एडवर्ड विलियम्स मोरले (1838–1923 ई.) द्वारा सन् 1880 के दशक में काल्पनिक ईथर का अस्तित्व दर्शाने के लिए किए गए प्रयोगों से अनेक सवाल उठ खड़े हुए। उनके समाधान के लिए लोरेन्ट्स ने जो विधि सुझाई उससे उन्हें बहुत प्रसिद्धि मिली। माइकेल्सन और मोरले के प्रयोग से यह सिद्ध नहीं होता था कि पृथ्वी काल्पनिक ईथर में गतिशील है। लोरेन्ट्स ने कहा कि यदि यह सच है कि वस्तुएं जब किसी दिशा में गतिशील होती हैं, अगर उनका आकार थोड़ा संकुचित हो जाता है तो माइकेल्सन–मोरले के प्रयोग के परिणामों पर विचार किया जा सकता है। उधर, फिट्सजेरल्ड भी अपने प्रयोगों से इसी नतीजे पर पहुंचा। इस घटना को अब 'लोरेन्ट्स–फिट्सजेरल्ड संकुचन' कहते हैं। 1904 में लोरेन्ट्स ने इसकी ठोस गणितीय व्याख्या प्रस्तुत की जिसे 'लोरेन्ट्स रूपांतरण' कहा जाता है। बाद में आइंस्टीन ने दर्शाया कि उनके विशेष आपेक्षिकता सिद्धांत में यह स्वत: स्पष्ट है।

लोरेन्ट्स ने ब्रुसेल्स में सन् 1911 मे आयोजित प्रथम सोल्वे सम्मेलन की अध्यक्षता की। इस सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य भौतिकी की दो विभिन्न धाराओं– चिरसम्मत भौतिकी तथा क्वांटम भौतिकी– की समस्या पर विचार करना था। सम्मेलन के उद्घाटन के अवसर पर अपने अध्यक्षीय भाषण में लोरेन्ट्स ने कहा: "इन स्थितियों में हमारे सम्मुख प्रकाश की एक अद्भुत किरण के रूप में ऊर्जा तत्वों की परिकल्पना प्रकट हुई जिसका प्रतिपादन सर्वप्रथम प्लांक ने किया और फिर आइंस्टाइन, नेन्स्ट तथा अन्य वैज्ञानिकों ने अनेक अद्भुत घटनाओं के रूप में उसका विस्तार किया। इसने हमारे लिए अत्याशित दृश्यों के द्वार खोल दिए और उन्हें भी जिन्हें इस पर किसी तरह का संदेह है, इसके महत्व और लाभ को स्वीकार करना चाहिए।" लोरेन्ट्स ने स्वयं कभी भी क्वांटम सिद्धांत को स्वीकार नहीं किया। उन्हें विश्वास था कि अंतत: यह नया सिद्धांत भी चिरसम्मत भौतिकी का ही हिस्सा बन जाएगा।

आगस्टिन ज्यां फ्रेसनेल

सन् 1912 में लोरेन्ट्स हारलेम स्थित टेलर संस्थान के अनुसंधान निदेशक बन गए। लेकिन, लीडेन विश्वविद्यालय के मानद प्रोफेसर बने रहे और वहां साप्ताहिक व्याख्यान देते रहे।

सन् 1905 में लोरेन्ट्स को रायल सोसायटी का सदस्य चुन लिया गया। उन्होंने रॉयल सोसायटी के रमफोर्ड पदक (1908) तथा कोप्ले पदक (1918) भी प्राप्त किए। सन् 1923 में उन्हें राष्ट्र संघ की "बौद्धिक

सहयोग की अंतरराष्ट्रीय समिति" का सदस्य चुना गया। सन् 1925 में लोरेन्ट्स इसके अध्यक्ष बने।

पीटर जीमान

4 फरवरी 1928 को लोरेन्ट्स का देहावसान हो गया। वे अपने समय में नीदरलैंड (हालैंड)के अत्यधिक सम्मानित वैज्ञानिक थे। नोबेल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिक ओवेन डब्लू. रिचर्डसन ने उनकी अंतिम यात्रा का वर्णन करते हुए लिखा: "उनका अंतिम संस्कार शुक्रवार, 10 फरवरी की दोपहर हारलेम में किया गया। बारह का घंटा बजते ही, हमारे समय में पैदा हुए हॉलैंड के उस महान सपूत को श्रद्धांजलि देते हुए देश भर में सरकारी टेलीग्राफ व टेलीफोन सेवाएं तीन मिनट के लिए बंद कर दी गई। शवयात्रा में अनेक सहयोगियों और प्रतिष्ठित विदेशी भौतिकीविदों ने भाग लिया। रॉयल सोसायटी के अध्यक्ष सर अर्नेस्ट रदरफोर्ड ने सोसायटी का प्रतिनिधित्व किया और उनकी समाधि के पास उनकी प्रशस्ति में प्रार्थना की।" इस वर्णन से नीदरलैंड में लोरेन्ट्स के आदर–सम्मान का साफ पता लगता है।

पॉल एडरेनफेस्ट

भौतिकी का विकास में लोरेन्ट्स के योगदान और एक इंसान के रूप में उनकी महानता का वर्णन आइंस्टाइन ने लोरेन्ट्स की जन्म शताब्दी के अवसर पर सन् 1953 में लीडेन विश्वविद्यालय को भेजे गए अपने संदेश में बहुत सुंदर शब्दों में किया। आइंस्टाइन ने अपने संदेश में लिखा: "इस शताब्दी की शुरुआत में सभी राष्ट्रों के सैद्धांतिक भौतिकीविदों ने एच. ए. लोरेन्ट्स को अपने बीच का एक अग्रणी वैज्ञानिक माना, जो ठीक भी था। हमारे समय के भौतिकीविदों को प्राय: यह पता नहीं है कि सैद्धांतिक भौतिकी के मूलभूत विचारों को मूर्तरूप देने में लोरेन्ट्स ने निर्णायक भूमिका निभाई थी। इस विलक्षण तथ्य का कारण यह है कि लोरेन्ट्स के आधारभूत विचारों में वे इतना ओतप्रोत हो गए हैं कि उन्हें इस बात का एहसास ही नहीं है लोरेन्ट्स के ये विचार कितने दुस्साहिक थे और भौतिक विज्ञान के बुनियादी ज्ञान को इन्होंने कितना सरल बना दिया। हमें लीडेन विश्वविद्यालय का आभारी होना चाहिए कि वहां मैं अपना कुछ समय प्राय: अपने प्रिय और अविस्मरणीय दोस्त पॉल एडरनफेस्ट के साथ बिताता हूं। इसलिए मुझे लोरेन्ट्स के व्याख्यान सुनने का सुअवसर मिल सका जो वे प्रोफेसर पद से अवकाश प्राप्त कर लेने के बाद भी अपने युवा सहयोगियों की छोटी–सी बैठक में देते थे। उनके श्रेष्ठ मस्तिष्क से जो विचार प्रवाहित होते थे वे किसी कलात्मक रचना की तरह बेहद सरल–सुबोध और सुंदर होते थे और वे उन्हें बेहद आसानी से प्रस्तुत कर देते थे। मैंने किसी और को ऐसा करते नहीं देखा। अगर हम युवा लोगों ने एच. ए. लोरेन्ट्स को इस महान रूप में देखा होता तो उनके प्रति हमारी प्रशंसा और सम्मान अद्वितीय होता। एच. ए. लोरेन्ट्स के बारे में मैं इससे भी कहीं अधिक महसूस करता हूं। व्यक्तिगत रूप से मेरे लिए उनका अर्थ जीवन में मिले किसी भी अन्य व्यक्ति से कहीं अधिक था।"

संदर्भ:

1. आइंस्टीन, अल्बर्ट। आइडियाज एंड ओपिनियंस, नई दिल्ली: रूपा एंड कं. 1984
2. डार्डो, मोरो। नोबेल लोरेन्ट्स एंड ट्वेंटिएथ सेंचुरी फिजिक्स, कैंब्रिज: कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 2004
3. हीलब्रॉन, जे. एल. (संपा.) द आक्सफोर्ड. कम्पेनियन टु द हिस्ट्री ऑफ मार्डन साइंस। ऑक्सफोर्ड : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2003
4. द कैंब्रिज डिक्शनरी ऑफ साइंटिस्ट्स (द्वितीय संस्करण)। कैंब्रिज: कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 2003
5. द नोबेल फाउंडेशन, नोबेल लैक्चर्स: फिजिक्स 1901–1921, एम्सटर्डम: एल्सेवीयर, 1967
6. डिक्शनरी ऑफ साइंटिस्ट्स। ऑक्सफोर्ड: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1999
7. पार्थसारथी, आर। पाथ्स ऑफ इन्नेवेटर्स इन साइंस, इंजीनियरिंग एंड टैक्नोलॉजी (खंड–2) चैन्नई। ईस्टवेस्ट बुक्स (मद्रास) प्रा. लिमि., 2003

अनुवादक : देवेंद्र मेवाड़ी

(पृष्ठ 2 का शेष)

बर्ड–फ्लू : पंखों पर से आता आतंक

अगर H5 N1 का आक्रमण होता है तो दुर्भाग्य से हमारे पास सुरक्षा के इंतजाम बहुत कमजोर हैं। H5 N1 विषाणु के प्रतिरोध के लिए हमारे पास बेहतर किस्म का टीका जो करीब एक साल से मौजूद है, मगर अभी तक इसका उचित रूप से परीक्षण नहीं किया गया है। न विभिन्न देशों की सरकारें तेजी से टेमीफ्लू नामक श्रेष्ठ दवा का भंडार जमा कर पा रही हैं। इसका आंशिक कारण यह भी है कि इस दवा का पेटेंट स्विस दवा–कंपनी रोश के पास है जिसने अब तक किसी अन्य को इसका निर्माण करने की अनुमति नहीं दी थी। विडंबना यह है कि रोश कंपनी धनी देशों की मांग को भी 2007 तक पूरा नहीं कर सकती। भारतीय दवा कंपनी सिप्ला का कहना है कि वह इसी दवा के एक अन्य रूप का विपणन दिसंबर 2005 में शुरू करेगी और जुलाई 2006 तक इलाज के लिए प्रतिमाह 10 कैप्स्यूलों के एक कोर्स के हिसाब से 10 लाख कोर्सों के लायक दवा बनाएगी।

बीते हुए समय की तुलना में शायद ऐसा पहली बार हुआ है जब हम 'फ्लू' की महामारी को आते हुए 'देख' पा रहे हैं। यह भी सही है कि पिछली महामारियों की तुलना में इस महामारी का सामना करने के लिए आज हम बेहतर स्थिति में हैं और अगर इसका आक्रमण होता है तो उसका असर कम करने के लिए हमारे पास अब कई वैज्ञानिक 'औजार' भी मौजूद हैं। अगर घातक H5 N1 विषाणु रूप बदल कर मनुष्यों पर आक्रमण नहीं भी करता है तो फ्लू का कोई दूसरा विषाणु जरूर हमला बोलेगा। हमारे सुरक्षा के इंतजाम जितने ही मजबूत होंगे, हम उतनी ही सफलता से इस चुनौती का सामना कर सकेंगे। हमें आत्मसंतुष्ट होकर नहीं बैठना चाहिए।

❐ विनय बी. काम्बले

क्वांटम भौतिकी का विचित्र संसार

❑ प्रदीप कुमार मुखर्जी

आपेक्षिकता सिद्धांत और क्वांटम यांत्रिकी आधुनिक बीसवीं सदी की भौतिकी के जुड़वां आधार स्तंभ माने जा सकते हैं। जहां आपेक्षिकता सिद्धांत अत्यधिक वेग से गतिमान पदार्थ के गुणधर्मों का नियमन करता है वहीं क्वांटम सिद्धांत सूक्ष्म निकाय, जैसे लघु खंडों, जिन्हें अवपरमाणविक कण कहते हैं, के व्यवहार को नियंत्रित करता है।

अपनी इस नायाब विशेषता के कारण ही क्वांटम यांत्रिकी अनुपम है। इसने भौतिकीविदों को वास्तविकता से संबंधित उनके विचारों की पुनर्समीक्षा, गहन स्तर पर वस्तुओं की प्रकृति पर पुनर्विचार करने तथा स्थिति व गति की अवधारणाओं के साथ–साथ कारण और प्रभाव की संधारणा संबंधी अपने विचारों को परिशोधित करने पर विवश कर दिया। विज्ञान के इतिहास में शायद क्वांटम सिद्धांत सबसे अधिक यथार्थता से परखा गया और सर्वाधिक सफल सिद्धांत है। फिर भी इस सिद्धांत की संकल्पनात्मक नींव रहस्यमयी है। न केवल क्वांटम यांत्रिकी अपने प्रवर्तकों के लिए एक बहुत बड़े सिरदर्द का कारण थी बल्कि आज भी इस सिद्धांत के कुछ पहलुओं को लेकर आम सहमति नहीं बन पाई है। इसकी चमत्कृत कर

क्या क्वांटम यांत्रिकी एक 'छलावा' है? *आइंस्टीन का यह मानना था कि उद्‌घाटित होने वाले विचित्र परिणामों के पीछे ब्रह्मांड चिरसम्मत भौतिकी के प्रागनुभूत सिद्धांतों के अनुरूप ही कार्य करता है*

देने वाली शक्ति को स्वीकारते हुए विज्ञान की नामी–गिरामी विभूतियां अभी भी इसके आधार स्तंभ और इसकी व्याख्या से असंतुष्ट हैं। दिसंबर 1926 में मैक्स बॉर्न को संबोधित किए एक पत्र में आइंस्टीन ने लिखा : ''क्वांटम यांत्रिकी बहुत प्रभावशाली है। लेकिन मेरे अंतर्मन की आवाज कहती है कि यह अभी भी असल चीज नहीं है। यह सिद्धांत वैसे तो हमें बहुत कुछ प्रदान करता है लेकिन सही अर्थों में यह (भौतिकी) के पुराने रहस्यों का उद्‌घाटन करने में भला कहां तक समर्थ है। मुझे पक्का यकीन है कि ईश्वर पांसा नहीं फेंकता है।''

दरअसल, आइंस्टीन ने क्वांटम सिद्धांत को कभी भी स्वीकार नहीं किया। क्वांटम यांत्रिकी की असंगतता को प्रदर्शित करने के लिए उन्होंने कई नायाब प्रयास किए और प्रसिद्ध सोल्वे सम्मेलनों में अनौपचारिक रूप से उन्हें प्रस्तुत किया। उस समय तक मानक या कोपेनहेगन के नाम से प्रसिद्ध हो चुकी व्याख्या के प्रबल पक्षधर बोर थे। दरअसल, क्वांटम यांत्रिकी की असंगतताओं और/या अपूर्णताओं से संबंधित बोर और आइंस्टीन के बीच के विवाद सन् 1955 में हुई आइंस्टीन की मृत्यु तक चलते रहे।

क्वांटम : शुरुआत

क्वांटम क्रांति को हवा देने वाला विचार पदार्थ के अध्ययन से नहीं बल्कि विकिरण से जुड़ी समस्या से सामने आया। तप्त पिंडों द्वारा उत्सर्जित प्रकाश के स्पेक्ट्रम को समझना एक विशिष्ट चुनौती थी जिसे भौतिकीविदों ने 'कृष्णिका विकिरण' (कृष्णिका एक ऐसा आदर्श पिंड होता है जो अपने ऊपर आपतित सभी आवृत्ति के विकिरणों को अवशोषित कर लेता है तथा यह सभी विकिरणों का उत्सर्जन भी करता है। लेकिन अवशोषित या उत्सर्जित विकिरण का स्पेक्ट्रम इसके तापमान पर आश्रित होता है) की संज्ञा दी। आग को लक्षित कर चुका कोई भी व्यक्ति इस परिघटना से परिचित होगा। गर्म पदार्थ दीप्तिमान होता है और जितना ही यह गर्म होता जाता है उतनी ही उसकी दीप्ति बढ़ती जाती है। प्रकाश का स्पेक्ट्रम विस्तृत होता है और उसका शिखर लाल से पीले रंग की ओर और अंततः नीले रंग की ओर यानी तापमान बढ़ने के साथ–साथ लघुत्तर तरंगदैर्घ्य की ओर विस्थापित हो जाता है।

उष्मागतिकी से लेकर विद्युत–चुंबकीय सिद्धांत की संयुक्त संकल्पनाओं के आधार पर प्रायोगिक रूप से प्राप्त वक्रों यानी कृष्णिका स्पेक्ट्रम के स्वरूप को समझाने के प्रयास किए गए। जहां कई वैज्ञानिकों को असफलता ही हाथ लगी वहीं विएन तथा रैले व जीन्स को स्वतंत्र रूप से कार्य करते हुए केवल आंशिक सफलता ही प्राप्त हो सकी। विएन का ऊर्जा–वितरण सूत्र, जिसे विएन का विस्थापन नियम कहते हैं, लघु तरंगदैर्घ्य के लिए कृष्णिका विकिरण को निरूपित करने वाले प्रायोगिक वक्रों की व्याख्या करने में सक्षम था लेकिन दीर्घ तरंगदैर्घ्य के लिए यह मान्य नहीं था। इसके बरक्स, रैले–जीन्स वितरण सूत्र दीर्घ तरंगदैर्घ्यों के लिए प्रायोगिक वक्रों की व्याख्या करने में सक्षम था, लेकिन लघु तरंगदैर्घ्यों के लिए नहीं। इस सूत्र ने यह दर्शाया कि आवृत्ति के बढ़ने (या तरंगदैर्घ्य के घटने) के साथ ऊर्जा घनत्व बढ़ता है और अंततः उच्च आवृत्ति की सीमा में यह अनंत हो जाता है। असल में आवृत्ति के अनंत की ओर उपगमन करने की सीमा ($\nu \rightarrow \infty$) में ऊर्जा घनत्व शून्य हो जाता है। इस विसंगति को पराबैंगनी विपदा (अल्ट्रावायलेट केटेस्ट्रॉफ) की संज्ञा दी जाती है।

आखिर विएन तथा रैले–जीन्स से कहां भूल हुई? जर्मनी के भौतिकीविद मैक्स प्लांक पर यह उद्‌घाटित हुआ कि चिरसम्मत सिद्धांत की मूलभूत अधिकल्पनाएं, जिन पर विएन और रैले–जीन्स के नियम आधारित थे, संभवतया सही नहीं थीं। प्लांक ने यह अधिकल्पना की कि एक कृष्णिका विकिरण प्रकोष्ठ (या कोटर) केवल विकिरण (अप्रगामी विद्युत–चुम्बकीय तरंगों के रूप में जिसका अस्तित्व होता है) द्वारा ही भरा नहीं होता बल्कि आणविक आकारों वाले सरल आवर्ती दोलकों, जो सभी संभव आवृत्तियों से कंपित हो सकते हैं, से भी भरा होता है। इन दोलकों को प्लांक दोलकों की संज्ञा दी जाती है। लेकिन आवृत्ति ν वाले किसी दोलक में सतत वितरण के रूप में सभी संभावित ऊर्जाएं नहीं मौजूद हो सकतीं बल्कि कुछ विविक्त या विशिष्ट ऊर्जाओं के मान ही इन्हें उपलब्ध हो सकते हैं। ये मान $h\nu$ के पूर्णांकीय गुणांक के बराबर होते हैं जहां h एक सर्वात्रिक नियतांक है जिसे ''क्वांटम ऑफ एक्शन'' (इसे बाद में प्लांक–नियतांक का नाम दिया गया) कहते हैं; इसका मान 6.626×10^{-34} जूल–सेकेंड है। इसे प्लांक की क्वांटम परिकल्पना कहते हैं जिसके अनुसार पदार्थ द्वारा ऊर्जा का उत्सर्जन या अवशोषण केवल कुछ विविक्त पिंडकों का ''क्वांटा'' के रूप में होता है। ऊर्जा का हर विविक्त बंडल या पिंडक ($h\nu$) क्वांटम (बहुवचन क्वांटा) h, जो लेटिन भाषा के 'कितना अधिक' से निकला है, कहलाता है।

घंटाकार वक्र के वास्तविक स्वरूप को समझाने के लिए प्लांक को एक और परिकल्पना का सहारा लेना पड़ा। उन्हें यह कल्पना करनी पड़ी कि उनके 'ऊर्जा के

क्वांटा' पदार्थ की विविक्त ऊर्जा अवस्थाओं में एक विशिष्ट चिरसम्मतेतर (नॉन–क्लासिकल) ढंग से वितरित होते हैं; अर्थात् उस ढंग से एकदम भिन्न जिस ढंग से कुछ साधारण गेंदें कुछ बक्सों में इधर–उधर बिना किसी क्रम के वितरित होती हैं।

सचमुच, मैक्स प्लांक ने क्वांटम यांत्रिकी के विकास के पहिए को आगे खिसकाने में पहल की। उनकी दो परिकल्पनाएं, जिनके पक्ष में उस समय कोई भी साक्ष्य नहीं था, परमाणविक जगत संबंधी हमारी समझ में क्रांति का सूत्रपात करने वाले थे। उनके इस कार्य के लिए, जिसे अब आधुनिक भौतिकी का शुरुआती बिन्दु माना जाता है, प्लांक को सन् 1918 में भौतिकी के नोबेल पुरस्कार से नवाजा गया था।

हालांकि प्लांक की क्वांटम परिकल्पना विकिरण से जुड़ी समस्या को सुलझाने में सफल रही लेकिन वह अपने सिद्धांत से संतुष्ट नहीं थे। अपनी क्वांटम परिकल्पना को उन्होंने हताशा की स्थिति में किए गए कार्य ('एन एक्ट ऑफ डेस्परेशन') माना था तथा काफी समय तक क्वांटा की भौतिक वास्तविकता के बारे में उनके मन में संदेह बना रहा। जैसा कि उन्होंने बाद में लिखा : ''चिरसम्मत सिद्धांत के साथ मूल क्वांटम का तालमेल बिठाने की मेरी नाकाम कोशिशें कई वर्षों तक चलती रहीं और इसके लिए मुझे अपने आपको काफी खपाना भी पड़ा ..... अब मुझे निश्चित तौर पर यह पता चल चुका है कि कर्म (ऊर्जा × समय) के क्वांटम (क्वांटम ऑफ एक्शन) की उससे कहीं अधिक गूढ़ सार्थकता है जिसकी कि मैंने शुरू में कल्पना की थी।''

सन् 1905 में अल्बर्ट आइंस्टीन ने प्लांक की क्वांटम अवधारणा को एक कदम और आगे बढ़ाया। उन्होंने यह कल्पना की कि विकिरण या प्रकाश क्वांटित होता है; तथा विकिरण द्वारा ऊर्जा का अवशोषण विविक्त पैकेटों या बंडलों के रूप में होता है जिन्हें अब फोटॉन (फोटॉन नामकरण रसायनविद गिल्बर्ट लेविस द्वारा काफी बाद में सन् 1926 में किया गया था) कहते हैं। उल्लेखनीय है कि आइंस्टीन के सिद्धांत में चिरसम्मत भौतिकी से व्यतिक्रम प्लांक के सिद्धांत की अपेक्षा कहीं अधिक शिद्दत से मौजूद था। प्लांक ने यह कल्पना की थी कि हालांकि किसी दोलक द्वारा विकिरण (या कोटर में मौजूद अप्रगामी तरंगें) को दी जाने वाली ऊर्जा ($h\nu$ मानयुक्त) विविक्त क्वांटा के रूप में होती है, विकिरण या तरंगें स्वयं परंपरागत तरंग सिद्धांत के अनुरूप ही व्यवहार करती हैं। लेकिन, आइंस्टीन के अनुसार न केवल विकिरण (या तरंगों) को दी जाने वाली ऊर्जा विविक्त क्वांटा के रूप में होती है बल्कि स्वयं विकिरण में मौजूद ऊर्जा भी विविक्त क्वांटा के रूप में होती है। प्रकाश–क्वांटम या फोटॉन की संधारणा के आधार पर आइंस्टीन प्रकाश–विद्युत प्रभाव, जिसमें धातुओं की सतह पर प्रकाश किरणों के आपतित होने पर उनसे इलेक्ट्रॉन विमुक्त होते हैं, की परिघटना को समझाने में सफल रहे। उन्होंने अपना प्रसिद्ध प्रकाश–विद्युत समीकरण भी प्रस्तुत किया जो सभी प्रयोगात्मक अवलोकनों को समझा पाने में सक्षम था। हालांकि अधिक तीव्रतायुक्त प्रकाश धातुओं से अधिक इलेक्ट्रॉनों को विमुक्त करता है, उत्सर्जित इलेक्ट्रॉनों का वेग प्रकाश की कम या अधिक तीव्रता से अप्रभावित रहता है। केवल एक ही उपाय से यानी भिन्न तरंगदैर्घ्य वाले आपतित प्रकाश द्वारा ही इन इलेक्ट्रॉनों का वेग परिवर्तित किया जा सकता है। आइंस्टीन के प्रकाश–विद्युत समीकरण के आधार पर इसकी व्याख्या की जा सकती है। यह समीकरण इस बात की व्याख्या कर पाने में भी सक्षम है कि एक क्रांतिक आवृत्ति (जिसे थ्रेशोल्ड फ्रिक्वेंसी कहते हैं) से कम आवृत्ति वाला प्रकाश फोटोइलेक्ट्रॉनों को क्यों विमुक्त नहीं कर पाता है। असल में, किसी भी धातु की सतह से पलायन करने के लिए किसी इलेक्ट्रॉन को एक निम्नतम ऊर्जा की आवश्यकता होनी चाहिए, अन्यथा इलेक्ट्रॉन धातु की सतह से हमेशा उत्सर्जित होते रहेंगे। इस ऊर्जा को धातु का कार्य फलन कहते हैं, और यह क्रांतिक आवृत्ति का h गुणा होता है। धातु का कार्य फलन जितना अधिक होता है उसकी सतह से इलेक्ट्रॉनों को बाहर निकलने के लिए उतनी ही अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है। और इस तरह प्रकाश–विद्युत उत्सर्जन के लिए उतनी ही अधिक क्रांतिक आवृत्ति की भी आवश्यकता होती है। प्रकाश–विद्युत प्रभाव की व्याख्या के लिए आइंस्टीन को सन् 1921 में भौतिकी का नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया था।

प्रकाश–विद्युत प्रभाव ने प्रकाश–विद्युत सेलों तथा प्रकाश–इलेक्ट्रॉन संवर्धकों (फोटोमल्टीप्लायर) का आविष्कार संभव बनाया। खगोलीय संसूचकों तथा टेलीविजन कैमरों में फोटोमल्टीप्लायर ट्यूबों का इस्तेमाल होता हैं। यही परिघटना आजकल के सौर या फोटोवोल्टायिक सेलों तथा डिजिटल कैमरों में प्रयुक्त होने वाले प्रतिबिंब संसरों (इमेज संसर) में भी काम में लाई जाती है।

आइंस्टीन की प्रकाश–विद्युत प्रभाव की व्याख्या से इस तथ्य को समर्थन मिला कि तरंगों के अलावा (विद्युत–चुम्बकीय) विकिरण कण–सदृश व्यवहार का भी प्रदर्शन कर सकती है। कांपटन प्रभाव ने भी इसका साक्ष्य प्रस्तुत किया कि विद्युत–चुंबकीय विकिरण कण–सदृश व्यवहार का प्रदर्शन कर सकती है। सन् 1927 में आर्थर हॉली कांपटन ने एक्स–किरणों के किसी ग्रेफाइट खंड द्वारा प्रकीर्णन के प्रयोग के द्वारा पाया कि प्रकीर्णित विकिरण में मूल तरंगदैर्घ्य के साथ बढ़ा हुआ तरंगदैर्घ्य भी मौजूद होता है। इस परिघटना को कांपटन प्रकाश–क्वांटा यानी फोटॉनों के आधार पर समझाने में सफल रहे।

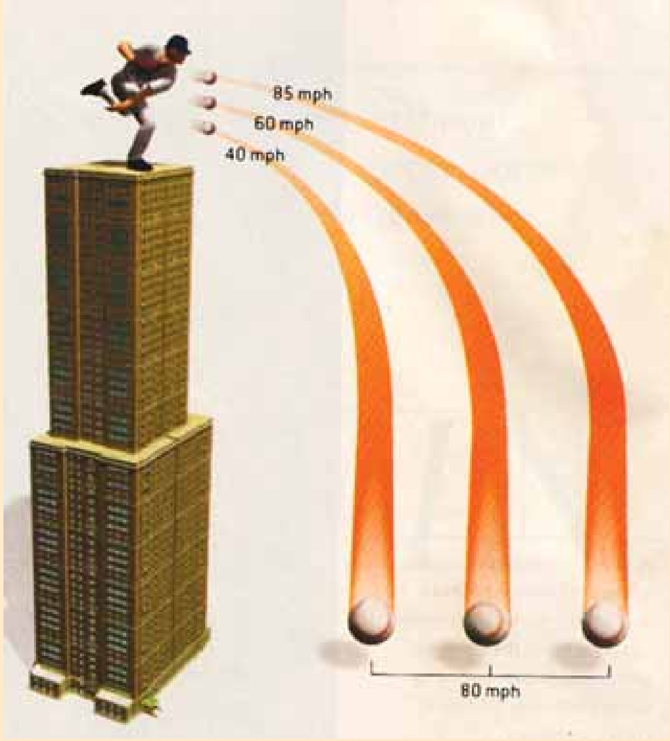

क्वांटम यांत्रिकी की एक चिरसम्मतीय व्याख्या घर्षण और सूचना हानि के रूप में दी जा सकती है। वायु–घर्षण के कारण किसी गगनचुंबी इमारत से गिराई गई गेंदें एक समान अंतिम वेग को प्राप्त होती हैं। धरती पर स्थित किसी प्रेक्षक के लिए उन गेंदों के आरंभिक वेगों का अंतर मिट जाता है। इसी तरह अगर यह ब्रह्मांड किसी अज्ञात किस्म के घर्षण द्वारा प्रभावित है तो क्वांटम यांत्रिकी हमें इस तथ्य की जानकारी देती है कि घटनाओं के परिणाम सभी संभावनाओं को व्यक्त न कर केवल विविक्त मान ही ग्रहण कर सकते हैं

बोर का तदर्थ क्वांटम सिद्धांत

सन् 1911 में लार्ड रदरफोर्ड ने एक परमाणविक मॉडल प्रस्तुत किया जिसमें इलेक्ट्रॉन एक लघु सौर मंडल की तरह धनावेशित नाभिक के इर्द–गिर्द चक्कर काटते हैं। यह 'सौर मंडल' वाला मॉडल बड़ा आकर्षक लगता था लेकिन इसमें एक जबर्दस्त कमी थी। चिरसम्मत विद्युत–चुम्बकीय सिद्धांत के अनुसार अपनी कक्षाओं में चक्कर काटते इलेक्ट्रॉनों से ऊर्जा का लगातार विकिरण होना चाहिए और एक सेकेंड के

ट्रिलियन (10^{-18}) सेकेंड के अंदर सर्पिलाकार पथ का अनुसरण करते हुए उन्हें नाभिक में जा गिरना चाहिए। अतः परमाणुओं के अवलोकित किए जाने वाले स्थायित्व को समझा पाने में रदरफोर्ड का मॉडल नाकाम रहा।

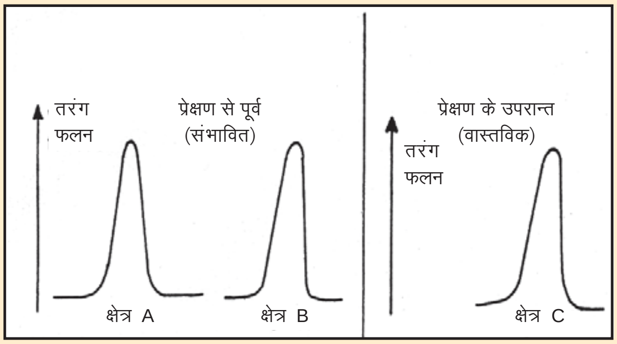

अवलोकन की प्रक्रिया दो (संभावित) तरंग फलनों में से एक के 'निपात' का कारण बनती है। यही कारण है कि अवस्थाओं के अध्यारोपण को विशाल या स्थूल वस्तुओं, जैसे श्रोडिंगर की बिल्ली के मामले में अवलोकित नहीं किया जाता है

उसी दौरान परमाणु स्पेक्ट्रमिकी (एटॉमिक स्पेक्ट्रॉसकोपी) के क्षेत्र में कार्य करने वाले वैज्ञानिकों ने हाइड्रोजन–सदृश परमाणुओं के उत्सर्जन स्पेक्ट्रम में अदीप्त पृष्ठभूमि में चमकदार रेखाओं का अवलोकन किया। स्विट्जरलैंड निवासी भौतिकीविद बामर ने हाइड्रोजन के दृश्य स्पेक्ट्रम में मौजूद स्पेक्ट्रमी रेखाओं के तरंगदैर्घ्यों के आपसी संबंधों को दर्शाने वाला एक सरल आनुभविक सूत्र प्रस्तुत किया। लेकिन अपने सूत्र के पीछे के सैद्धांतिक आधार को समझा पाने में बोर असफल रहे। सन् 1913 में डेनमार्क के भौतिकीविद नील्स बोर, जो रदरफोर्ड के साथ कार्य करने के लिए मैनचेस्टर विश्वविद्यालय आए थे, ने इलेक्ट्रॉन की कक्षाओं पर एक तदर्थ क्वांटम प्रतिबंध को आरोपित किया। बोर ने कहा कि इलेक्ट्रॉनों की सभी कक्षाएं ही अनुमत नहीं होती हैं। केवल वे ही कक्षाएं अनुमत होती हैं जिनके लिए इलेक्ट्रॉन का कोणीय संवेग (L) प्लांक के नियतांक को 2π से भाग देने पर प्राप्त होने वाली राशि का पूर्णांकीय गुणांक होता है :

$$L=nh=n(h/2\pi)$$

इस क्वांटम प्रतिबंध के प्रयोग द्वारा बोर रदरफोर्ड मॉडल के पुनरुद्धार में सफल हुए। इस तरह परमाणविक स्थायित्व की समस्या से निपटने में बोर सफल हुए और परमाणुओं की दुनिया में क्वांटम भौतिकी को लगाने में उन्होंने अपना योगदान दिया। हाइड्रोजन के उत्सर्जन स्पेक्ट्रम में आने वाली स्पेक्ट्रमी रेखाओं को समझाने में भी बोर सफल रहे। उनके अनुसार क्वांटम प्रतिबंध का पालन करने वाले स्थाई इलेक्ट्रॉन–कक्षाओं का अस्तित्व विविक्त या क्वांटित ऊर्जा स्तरों के रूप में ही हो सकता है। जब इन निश्चित ऊर्जायुक्त अनुमत कक्षाओं के बीच इलेक्ट्रॉन 'क्वांटम झंप' लगाते हैं तो एकदम निश्चित आवृत्ति या तरंगदैर्घ्य वाले प्रकाश का उत्सर्जन या अवशोषण होता है जो प्रेक्षित उत्सर्जन का अवशोषण रेखीय स्पेक्ट्रम की उत्पत्ति के लिए जिम्मेदार होता है।

बोर का सिद्धांत हीलियम परमाणु पर भी लागू पाया गया, पर इसके लिए दो इलेक्ट्रॉनों में से एक इलेक्ट्रॉन का परमाणु से विलग किया जाना आवश्यक था। उनके सिद्धांत ने आनुभविक तौर पर अवलोकित नए स्पेक्ट्रमों, जैसे हाइड्रोजन परमाणु के पराबैंगनी परिसर में स्थित स्पेक्ट्रम के अस्तित्व के बारे में भी पूर्वानुमान प्रस्तुत किया। इन पूर्वानुमानों की बाद में पुष्टि भी हुई।

हाइड्रोजन–सदृश परमाणुओं तथा विकिरण से जुड़ी घटनाओं को समझाने में बोर के सिद्धांत को काफी सफलता मिली, लेकिन कई अनुत्तरित प्रश्न भी थे। उदाहरण के लिए, कुछ स्पेक्ट्रमी रेखाओं में सूक्ष्म संरचनाओं (फाइन स्ट्रक्चर) की मौजूदगी अवलोकित की गई थी। शुरू में ऐसा सोचा गया कि बोर के सिद्धांत में छोटे–मोटे संशोधन करके ही इस तरह के परिणामों को समझा जा सकता है। लेकिन, स्पेक्ट्रमी रेखाओं की आपेक्षिक तीव्रता की व्याख्या संभव न हो सकी। हाइड्रोजन परमाणु संबंधी सिद्धांत को और भी जटिल किस्म के परमाणुओं पर लागू करने के प्रयासों में भी कई कठिनाइयां सामने आईं। जल्दी ही यह स्पष्ट हो गया कि बोर का सिद्धांत ही सब रोगों की दवा नहीं है और इसलिए एक सर्वथा 'नवीन सोच' की जरूरत है। वैज्ञानिकों को लगा कि वैश्विक विचारधारा में एक मूलभूत परिवर्तन की आवश्यकता है।

तरंग–कण द्वैतवाद

सन् 1923 में लुई द ब्रॉग्ली ने अपने पी–एच.डी. प्रबंध में यह प्रस्तावित किया कि प्रकाश के कण–सदृश व्यवहार की तरह कणों को भी तरंगों जैसे व्यवहार का प्रदर्शन करना चाहिए। किसी कण के संवेग के साथ एक तरंगदैर्घ्य के संबद्ध होने की उन्होंने कल्पना की। यह तरंगदैर्घ्य संवेग के व्युत्क्रमानुपाती होता है :

$$\lambda \alpha 1/p$$

या $\lambda = h/p$

जहां h प्लांक–नियतांक है।

गतिमान कणों के साथ तरंगों (जिन्हें मैटर वेव यानी पदार्थ तरंगों की संज्ञा दी जाती है) के संबद्ध होने की अवधारणा चमत्कारी थी। द ब्रॉग्ली की परिकल्पना की पुष्टि डेविसन व जर्मर तथा जी.पी. थॉमसन द्वारा स्वतंत्र रूप से अंजाम दिए गए प्रयोगों द्वारा हुई।

द ब्रॉग्ली के सूत्र के अनेक अनुप्रयोग सामने आए हैं। उच्च गतिशील या उच्च ऊर्जावान इलेक्ट्रॉनों के साथ संबद्ध (द ब्रॉग्ली) तरंगदैर्घ्य दृश्य प्रकाश के तरंगदैर्घ्य की तुलना में बहुत कम होता है। यही कारण है कि इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शियों की विभेदन क्षमता प्रकाशीय सूक्ष्मदर्शियों की तुलना में बहुत कम होती है। द ब्रॉग्ली की तरंगें बोर के परमाणु से जुड़े तदर्थ क्वांटम प्रतिबंध को भी व्याख्यायित करती हैं। केवल वे ही इलेक्ट्रॉन–कक्षाएं अनुमत होंगी जिनकी कक्षीय लंबाई (आर्बिटल लैंथ) इलेक्ट्रॉन के साथ संबद्ध तरंगदैर्घ्य के पूर्णांकीय गुणांक के बराबर होती है। शेष सभी कक्षाएं विनाशी व्यतिकरण (डिस्ट्रक्टिव इंटरफेरेंस) के चलते विलुप्त हो जाती हैं।

बड़े आकार की वस्तुओं, जैसे गेंद और कारतूस के साथ संबद्ध द ब्रॉग्ली तरंगदैर्घ्य का मान इतना कम होता है कि क्वांटम प्रभाव पूरी तरह से गौण हो जाते हैं और चिरसम्मत यांत्रिकी के नियम ही उन पर लागू होते हैं।

बोस–आइंस्टीन सांख्यिकी : एक क्वांटम संकल्पना

सन् 1924 की ग्रीष्म ऋतु में सत्येंद्र नाथ बोस ने प्लांक के विकिरण नियम को समझाने के लिए एक सर्वथा नवीन विधि प्रस्तावित की। उन्होंने प्रकाश की कल्पना द्रव्यमानरहित कणों के एक गैस (जिसे अब फोटॉन गैस कहते हैं) के रूप में की। बोस को यह प्रदर्शित करने में सफलता मिली कि गैस के कण बोल्ट्समान सांख्यिकी के चिरसम्मत नियमों का पालन न कर अपनी अविभेद्य प्रकृति के कारण एक सर्वथा भिन्न सांख्यिकी के अनुरूप व्यवहार करते हैं। लेकिन बोस का यह शोध–पत्र प्रकाशन के लिए स्वीकृत नहीं हुआ। इसलिए उन्होंने आइंस्टीन को अपना यह शोध पत्र भेजा।

आइंस्टीन ने बोस के कार्य के महत्व को तुरंत पहचाना। उन्होंने इस लेख का जर्मन भाषा में अनुवाद किया और एक प्रतिष्ठित जर्मन पत्रिका में इसके प्रकाशन का प्रबंध करवाया। बोस के (सैद्धांतिक) तर्क को फोटॉनों से भिन्न कणों पर लगाकर आइंस्टीन को यह प्रदर्शित करने में सफलता मिली कि वे बोस द्वारा विकसित सांख्यिकी का ही पालन करते हैं। बोस और आइंस्टीन दोनों के नाम पर ही इसे अब बोस–आइंस्टीन सांख्यिकी कहते हैं।

क्वांटम के क्षेत्र में नई क्रांतिकारी खोजों की बाढ़

जनवरी 1925 से जनवरी 1928 के मध्य के तीन वर्षों की समयावधि में

क्वांटम सिद्धांत के क्षेत्र में अचानक नई घटनाओं की एक बाढ़–सी आ गई जिसकी परिणति एक वैज्ञानिक क्रांति के रूप में हुई। सन् 1925 में वुल्फगैंग पॉली ने अपना अपवर्जन (एक्सक्लूजन) सिद्धांत दिया, जिसके अनुसार कोई भी दो इलेक्ट्रॉन एक ही क्वांटम अवस्था में नहीं रह सकते। पॉली के इस सिद्धांत ने आवर्त्त सारणी के लिए भी एक ठोस सैद्धांतिक आधार प्रस्तुत किया। उसी वर्ष वर्नर हाइजेनबर्ग ने मैक्स बॉर्न और पास्कुएल जॉर्डन के साथ मिलकर आव्यूह यांत्रिकी (मैट्रिक्स मैकेनिक्स) की खोज की। सन् 1926 में इर्विन श्रोडिंगर ने क्वांटम जगत की व्यवस्था के लिए एक वैकल्पिक सिद्धांत को प्रस्तावित किया जिसे तरंग यांत्रिकी का नाम दिया गया। तरंग–कण द्वैतवाद पर द ब्रॉग्ली के कार्य से प्रभावित होकर श्रोडिंगर ने अपने शोध कार्य में पदार्थ तरंगों द्वारा उत्पन्न परिणामों की छानबीन की तथा उनके लिए एक तरंग समीकरण (वेव इक्वेशन) प्रस्तावित किया। श्रोडिंगर समीकरण कहलाने वाला यह समीकरण प्रकृति में मौजूद अन्य तरंग गतियों को वर्णित करने वाले समीकरणों से मिलता–जुलता ही था। हालांकि श्रोडिंगर की तरंग यांत्रिकी तथा हाइजेनबर्ग की आव्यूह यांत्रिकी शुरू में बिल्कुल अलग–थलग लगती थीं, लेकिन बाद में दोनों एक ही सिक्के के महज दो पहलू साबित हुईं। यानी क्वांटम यांत्रिकी का वर्णन करने के ये महज दो वैकल्पिक तरीके थे।

श्रोडिंगर के कैट पैराडॉक्स को दर्शाने वाला आरेख। सही ढंग से आवर्धित होकर एक क्वांटम परिघटना विष को छोड़ने में विमोचक का कार्य कर सकती है। किसी बाध्य प्रेक्षक, जिसके लिए बक्से के भीतर का प्रेक्षण संभव नहीं है, के लिए संभावित बिल्ली की जीवित एवं मृत इन दोनों अवस्थाओं के अध्यारोपण के रूप में पाई जाती है

सन् 1920 में एनरिको फर्मी तथा पॉल डिराक ने यह प्रस्तावित किया कि इलेक्ट्रॉन एक नई सांख्यिकी का पालन करते हैं। इसे फर्मी–डिराक सांख्यिकी का नाम दिया गया। इलेक्ट्रॉन, फर्मियान नामक कणों के एक वर्ग से संबंध रखते हैं (पदार्थ का निर्माण करने वाले इलेक्ट्रान, प्रोटॉन, न्यूट्रॉन आदि सभी फर्मियान ही हैं) जिनका स्पिन अर्द्धपूर्णांकीय होता है। इसके बरक्स बोसॉनों (फोटॉन, हीलियम के परमाणु, अल्फा कण, मेसॉन, गेविटॉन आदि सभी बोसॉन होते हैं) का (शून्य समेत) पूर्णांकीय स्पिन होता है और ये कण बोस–आइंस्टीन सांख्यिकी का पालन करते हैं।

सन् 1927 में वर्नर हाइजेनबर्ग ने अनिश्चितता के सिद्धांत का प्रतिपादन किया कि किसी भी कण की स्थिति और उसके संवेग का एक ही साथ परिशुद्ध मापन कर पाना असंभव है अनिश्चितता के सिद्धांत के अनुसार परमाणविक जगत में होने वाले मापनों में एक अंतर्निहित अनिर्धार्यता होती है जो क्वांटम यांत्रिकी का बुनियादी पहलू है। यह सिद्धांत चिरसम्मत यांत्रिकी की इस विश्वव्यापी अवधारणा कि किसी कण की स्थिति और संवेग का समक्षणिक मापन पूर्ण परिशुद्धता के साथ किया जा सकता है, के सर्वथा विरोध में है।

प्रतिपदार्थ तथा क्वांटम क्षेत्र सिद्धांत का पूर्वानुमान

सन् 1928 में पी.ए.एम. डिराक ने इलेक्ट्रॉन के लिए एक आपेक्षिकीय तरंग समीकरण (रिलेटिविस्टिक वेव इक्वेशन) का विकास किया। यह समीकरण इलेक्ट्रॉन स्पिन को समझाने में सफल रहा तथा इसने प्रतिपदार्थ के अस्तित्व के बारे में पूर्वानुमान भी प्रस्तुत किया। सन 1932 में कार्ल डेविड एंडरसन पॉजिट्रॉन नामक इलेक्ट्रॉन के प्रतिकण को खोजने में कामयाब रहे। इस तरह ब्रह्मांड में प्रतिपदार्थ के अस्तित्व के बारे में प्रथम साक्ष्य उपलब्ध कराने में क्वांटम यांत्रिकी ने अपना योगदान दिया।

सन् 1926 में डिराक ने विद्युत–चुंबकीय क्षेत्र के क्वांटम वर्णन द्वारा क्वांटम क्षेत्र सिद्धांत की नींव रखी। लेकिन उनके सिद्धांत में कुछ खामियां एवं असंगतताएं थीं। सन् 1948 में रिचार्ड फाइनमैन, जूलियन श्विंगर तथा सिन–इटिरो टोमोनागा ने डिराक के सिद्धांत में से इन असंगतताओं और खामियों को दूर करके क्वांटम विद्युत गतिकी की सशक्त नींव रखी।

क्वांटम विद्युतगतिकी लेप्टॉनों (इलेक्ट्रॉन, म्यूऑन, टाव मेसॉन तथा उनके प्रतिकण) के व्यवहार को समझाने में तो समर्थ है लेकिन यह हेडरॉन नामक अपेक्षाकृत भारी व जटिल कणों, जो दो या तीन क्वार्कों से मिलकर बने होते हैं, का वर्णन कर पाने में असमर्थ है। तीन क्वार्कों से मिलकर बने हेडरॉनों, जैसे प्रोटॉन, न्यूट्रॉन आदि को बेरियॉन कहते हैं जबकि दो क्वार्कों से बने हेडरॉनों को मेसॉनों की संज्ञा दी जाती है। हेडरॉनों (की व्याख्या) के लिए एक नए सिद्धांत का विकास किया जाना आवश्यक था। इस सिद्धांत को, जो क्वांटम विद्युतगतिकी के सिद्धांत का व्यापकीकरण है, क्वांटम क्रोमोडायनामिक्स कहते हैं।

क्वांटम इलेक्ट्रोडायनामिक्स में आवेशित कणों के बीच के बल की मध्यस्थता फोटॉन द्वारा की जाती है जबकि क्वांटम क्रोमोडायनामिक्स में क्वार्कों के बीच बल की मध्यस्थता ग्लूऑन करते हैं। क्वांटम विद्युतगतिकी और क्वांटम क्रोमोडायनामिक्स में कुछ अनुरूपताएं होने के बावजूद उनमें एक महत्वपूर्ण अंतर होता है। लेप्टॉनों और फोटॉनों के बरक्स क्वार्क तथा ग्लूऑन हमेशा हेडरॉनों के अंदर ही कैद रहते हैं। उन्हें विमुक्त करके स्वतंत्र कणों की तरह उनका अध्ययन कर पाना संभव नहीं है।

क्वांटम विद्युतगतिकी और क्वांटम क्रोमोडायनामिक्स स्टैंडर्ड मॉडल, जो मूल कण भौतिकी का आधार स्तंभ है, के नाम से जाने जाने वाले एक महाएकीकृत सिद्धांत के महत्वपूर्ण अंग हैं। आज पदार्थ की चरम प्रकृति को समझने के प्रयास में भौतिकीविद गुरुत्वाकर्षण का क्वांटम वर्णन करने वाले सिद्धांतों की खोज में लगे हैं। तंतु सिद्धांतों (जो कम से कम पांच हैं), जिन्हें संयुक्त रूप से अक्सर एम–थ्योरी की संज्ञा दी जाती है, को अनेक भौतिकीविद क्वांटम यांत्रिकी और गुरुत्वाकर्षण के एकीकरण के एक सशक्त साधन के रूप में देखते हैं।

क्वांटम भौतिकी : विविध अनुप्रयोग

प्रतिपदार्थ का पूर्वानुमान प्रस्तुत करने के अलावा रेडियोधर्मिता की व्याख्या तथा अन्योन्यक्रियाओं जैसे प्रकाश और पदार्थ की अन्योन्यक्रिया (जिसने लेसर की खोज को संभव बनाया) तथा रेडियो तरंगों और नाभिकों की अन्योन्यक्रिया (जिसने चुंबकीय अनुनाद प्रतिबिंबन को संभव बनाया) का वर्णन करने में भी क्वांटम यांत्रिकी का योगदान रहा है। अणुओं, ठोसों व द्रवों तथा चालकों व अर्द्धचालकों की मात्रात्मक व्याख्या प्रदान करने में भी क्वांटम सिद्धांत का योगदान है। अतिचालकता व अतितरलता तथा पदार्थ के विचित्र रूपों, जैसे न्यूट्रॉन तारों व बोस–आइंस्टीन संघनितों, जिनमें गैस के सभी परमाणु एकल महापरमाणु की तरह व्यवहार करते हैं, की व्याख्या भी यह करता है। अतिचालक क्वांटम व्यतिकरण युक्ति (स्कुइड), जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है, एक क्वांटम युक्ति है जो क्वांटम गुणधर्मों का प्रदर्शन करती है। अति क्षीण चुंबकीय क्षेत्रों को मापने में सक्षम इस युक्ति के चिकित्सा विज्ञान (मस्तिष्क और/या हृदय द्वारा उत्पन्न किए गए सूक्ष्म चुंबकीय क्षेत्रों में होने वाली अनियमितताओं की जांच आदि में) से लेकर भूगर्भ विज्ञान तक व्यापक उपयोग हैं। स्कुइड इसका एक व्यावहारिक उदाहरण प्रस्तुत करता है कि कुछ विशेष परिस्थितियों में, विशाल (या स्थूल) वस्तुएं भी क्वांटम व्यवहार का प्रदर्शन कर सकती हैं। अतः यह अभिधारणा कि विशाल या स्थूल

युक्तियां हमेशा चिरसम्मत भौतिकी द्वारा ही पूर्णतया वर्णित की जानी चाहिएं जरूरी नहीं कि हमेशा सत्य ही हों। टेक्नोलॉजी के नए क्षेत्रों, जैसे इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शियों, प्रकाश–इलेक्ट्रॉन संवर्धकों, सौर सेलों तथा माइक्रोप्रोसेसर–आधारित इलेक्ट्रॉनिक क्रांति के पीछे भी क्वांटम यांत्रिकी का योगदान रहा है। संक्षेप में कहें तो इस पार्थिव जगत को समझने और उसमें फेर–बदल करने में क्वांटम यांत्रिकी हमें सक्षम बनाती है; विज्ञान की सभी शाखाओं तथा हर उन्नत प्रौद्योगिकी के लिए जरूरी औजार यह हमें मुहैया कराती है।

विवाद एवं विरोधाभास

अपने विविध अनुप्रयोगों के बावजूद क्वांटम यांत्रिकी विवादमुक्त नहीं है। क्वांटम यांत्रिकी के कुछ पहलुओं की व्याख्या ने कुछ विरोधाभासों को भी जन्म दिया है। उल्लेखनीय है कि क्वांटम यांत्रिकी के दो भिन्न संरूपणों यानी आव्यूह यांत्रिकी और तरंग यांत्रिकी में से तरंग यांत्रिकी का प्रयोग ही अधिक सरल माना जाता है। इस विधि में श्रोडिंगर समीकरण, जो किसी क्वांटम निकाय के व्यवहार को वर्णित करता है, का हल प्राप्त किया जाता है। श्रोडिंगर समीकरण के हल को तरंग फलन कहते हैं। इस तरह किसी क्वांटम निकाय के बारे में पूर्ण जानकारी उसके तरंग फलन द्वारा हमें प्राप्त होती है, तथा तरंग फलन द्वारा सभी प्रेक्षणीय राशियों के संभावित मान परिकलित किए जा सकते हैं।

शुरू में श्रोडिंगर तरंगों का स्वरूप कुछ अस्पष्ट–सा था। किसी माध्यम में होने वाले विक्षोभ के रूप में ही किसी तरंग की कल्पना की जाती है। लेकिन, क्वांटम यांत्रिकी में कोई माध्यम नहीं होता है; और एक तरह से इसमें कोई तरंग भी नहीं होती है क्योंकि तरंग फलन मूल रूप से किसी निकाय के बारे में सूचना या जानकारी को ही अपने अंदर समाहित किए रहती है। फिर तरंग फलन की सटीक व्याख्या क्या है? मैक्स बॉर्न की अंतर्दृष्टि के अनुसार तरंग फलन की व्याख्या संभावनाओं के रूप में ही की जानी चाहिए। जैसा कि बॉर्न ने सुझाया था, दिक् के किसी निर्धारित आयतन में किसी इलेक्ट्रॉन के पाए जाने की संभावना उसके तरंग फलन के परम वर्ग पर आश्रित होती है। इससे यह बात स्पष्ट हुई कि तरंग फलन की साधारण व्याख्या कि यह पदार्थ तरंगों को सामान्य दिक् में निरूपित करता है, जैसी कि श्रोडिंगर ने मूलतः कल्पना की थी, गलत थी। बॉर्न की व्याख्या से यह बात सामने आई कि प्रकृति के नियमों में एक आधारभूत यादृच्छिकता समाहित होती है। इस निष्कर्ष से आइंस्टीन गहन रूप से असंतुष्ट थे। निर्धारणात्मक ब्रह्मांड के प्रति उनके द्वारा अक्सर दी जाने वाली युक्ति, जिसका उल्लेख हम पहले कर चुके हैं, कि ईश्वर पांसा नहीं फेंकता है के द्वारा उन्होंने अपनी तरजीह जताई।

श्रोडिंगर स्वयं भी खुश नहीं थे। तरंग फलन विभिन्न अवस्थाओं के संयोजनों यानी तथाकथित अध्यारोपणों को वर्णित कर सकता है। उदाहरण के लिए, एक इलेक्ट्रॉन अपनी विभिन्न स्थितियों के अध्यारोपण के रूप में पाया जा सकता है। श्रोडिंगर ने बताया कि अगर परमाणु सदृश सूक्ष्म कण विभिन्न अध्यारोपणों के रूप में पाए जा सकते हैं तो स्थूल वस्तुएं भी इसी तरह के व्यवहार का प्रदर्शन कर सकती हैं क्योंकि वे भी परमाणुओं से ही बनी होती हैं। यह क्वांटम अध्यारोपण विरोधाभासों को जन्म दे सकता है। ऐसे ही विरोधाभासों में से एक का वर्णन श्रोडिंगर ने एक वैचारिक प्रयोग, जिसमें एक बिल्ली शामिल थी, के रूप में सन् 1925 में किया था।

श्रोडिंगर का 'कैट पैराडॉक्स'

एक पूर्ण रूप से सीलबंद बक्से की कल्पना कीजिए जिसके अंदर एक बिल्ली कैद है तथा जिसमें एक ऐसी युक्ति भी मौजूद है जिसके भीतर पोटेशियम सायनायड के रूप में घातक विष भरा है। कोई क्वांटम घटना, उदाहरण के लिए किसी यूरेनियम परमाणु का विखंडन, इस युक्ति के लिए एक विमोचक (ट्रिगर) का कार्य करता है। इस विमोचक द्वारा सायनायड छूटता है और बिल्ली मर जाती है; अन्यथा वह जीवित रहती है। स्पष्ट है कि रेडियोधर्मी परमाणु दो संभावित अवस्थाओं के अध्यारोपण के रूप में पाया जाता है – अर्थात् विखंडित एवं अविखंडित। इस परिदृश्य में, क्वांटम प्रक्रिया का प्रवर्धन बिल्ली की अवस्था के निर्धारण के लिए होता है। रेडियोधर्मी परमाणु की दो संभावित अवस्थाओं का अध्यारोपण बिल्ली की मृत या जीवित संभाव्य अवस्थाओं के अध्यारोपण के रूप में रूपांतरित हो जाता है यानी बिल्ली मृत एवं जीवित दोनों संभावनाओं के अध्यारोपण के रूप में पाई जाती है।

अब अगर उस बक्से और उसके अंदर की सभी वस्तुओं को समष्टित रूप से एक क्वांटम निकाय मान लिया जाए तो उसका कालिक विकास दोनों संभव विकल्पों के रैखिक संयोजन के रूप में होगा। बक्से के बाहर स्थित किसी प्रेक्षक के लिए, जो उसके अंदर का प्रेक्षण करने में सक्षम नहीं है, बिल्ली जीवित और मृत दोनों संभावनाओं के रैखिक संयोजन के रूप में पाई जाती है। प्रेक्षणीय अवस्थाओं की संभाविता को ज्ञात करने के लिए हमें इस आयाम या तरंग फलन (जो संभाविता की सूचक है) का परम वर्ग निकालना होगा। हमारी अपेक्षानुरूप दो मुख्य पद मृत एवं जीवित बिल्ली की दो अवस्थाओं से संबंधित होने चाहिएं। मृत एवं जीवित बिल्ली की दोनों अवस्थाओं के सहसंयोजन द्वारा ही हमें व्यतिकरण पद प्राप्त होना चाहिए। लेकिन, इस तरह का व्यतिकरण कभी भी अवलोकित नहीं किया गया है। जब बंद बक्से को खोला जाता है तो बिल्ली या तो जीवित पाई जाती है या मृत। यही श्रोडिंगर का प्रसिद्ध बिल्ली विरोधाभास है।

इस विरोधाभास के मूल में अध्यारोपण या व्यतिकरण पद यानी बिल्ली की जीवित और मृत अवस्थाओं का संयोजन ही है। इलेक्ट्रॉनों, परमाणुओं आदि के मामले में ऐसे अध्यारोपणों को असंख्य बार प्रदर्शित किया जा चुका है लेकिन हमारे दैनंदिन के जगत में हम इन्हें अवलोकित नहीं कर पाते हैं। यही अंतर्विरोध क्वांटम यांत्रिकी का एक चिरंतन रहस्य बना हुआ है। इस रहस्य के समाधान के लिए दशकों से कोपेनहेगन व तरंग फलन की बहु–संसारों वाली व्याख्या तथा विसंबद्धता के सिद्धांत समेत अनेक अवधारणाओं का विकास भौतिकीविदों ने किया है।

कोपेनहेगन व्याख्या के अनुसार एक निकाय, जिसे प्रेक्षित न किया जा रहा हो, का कालिक विकास तात्विक रूप से संभावनात्मक एवं निर्धारणात्मक ढंग से होता है तथा जिसका नियमन श्रोडिंगर समीकरण द्वारा होता है। लेकिन, जब वह निकाय प्रेक्षित किया जाता है तो उसके तरंग फलन में सहसा परिवर्तन होता है और प्रेक्षक उस निकाय की केवल एक निश्चित (चिरसम्मत) अवस्था को ही प्रेक्षित करता है। इसके बाद तरंग फलन का केवल वह हिस्सा ही बचा रहता है; तरंग फलन का दूसरा हिस्सा गायब हो होता है या निपात को प्राप्त होता है और निकाय के परवर्ती विकास में उसकी कोई भूमिका नहीं होती है।

अवलोकन की क्रिया के साथ संबद्ध ''निपात'' की परिकल्पना इसकी व्याख्या करने में सक्षम है कि अवस्थाओं का अध्यारोपण दैनंदिन के जगत की वस्तुओं, जैसे श्रोडिंगर की बिल्ली के मामले में क्यों अवलोकित नहीं किया जाता है। इस तरह विरोधाभास का समाधान हो जाता है।

निपात की परिकल्पना प्रिंस्टन विश्वविद्यालय के एच. एवरेट समेत कई वैज्ञानिकों को स्वीकार्य नहीं थी। अतः अपने शोध प्रबंध में इस परिकल्पना पर पुनर्विचार करने का निर्णय एवरेट ने लिया। उन्होंने अपना यह सिद्धांत प्रस्तुत किया कि मापनों द्वारा निपात को प्राप्त होने की बजाए सूक्ष्म अध्यरोपण बड़ी तेजी से प्रवर्धित होकर बड़े ही जटिल और विशद किस्म के स्थूल अध्यारोपणों में बदल जाते हैं। बिल्ली के मामले को ही लिया जाए। बिल्ली या तो जीवित होगी या मृत। कोई प्रेक्षक अपनी दो भिन्न मानसिक अवस्थाओं के अध्यारोपणों में प्रवेश कर जाता है। इनमें से एक में वह बिल्ली को जीवित

और दूसरी में उसे मृत रूप में देखता है। संपूर्ण तरंग फलन के ये दो हिस्से दो समांतर संसारों की तरह पूरी तरह से स्वतंत्र रूप से (कालिक) विकास को प्राप्त होकर अपने अस्तित्व को बनाए रखते हैं। एवरेट के इस दृष्टिकोण को क्वांटम यांत्रिकी की बहु–संसारों वाली व्याख्या के रूप में प्रसिद्धि मिली। यह इसलिए क्योंकि हर अध्यारोपण केवल अपने ही संसार से वास्ता रखता है।

एवरेट की बहु–संसारों वाली व्याख्या ने एक मूल प्रश्न को अनुत्तरित छोड़ दिया था कि अगर जगत में विचित्र किस्म के ऐसे सूक्ष्म अध्यारोपणों का अस्तित्व है तो हमारा उनसे वास्ता क्यों नही पड़ता है? इसका उत्तर हाइडेलबर्ग विश्वविद्यालय से संबद्ध एच. डायटर जेह और बाद में लॉस एलामोस के वैज्ञानिक वोजेख एच. ज्यूरेक तथा अन्य वैज्ञानिकों ने सन् 1970 में दिया। उन्होंने बताया कि संसक्त अध्यारोपण तभी तक अपना अस्तित्व बनाए रखते हैं जब तक कि शेष जगत और उनके मध्य एक परदा पड़ा रहता है। लेकिन जब कोई वस्तु (उदाहरण के लिए, बिल्ली) अपने आस–पास के परिवेश से पृथक्कृत नहीं की जा सकती तब परिवेश से अंत:क्रिया करके अध्यारोपण को विनष्ट कर यह उसे अप्रेक्षित बनाने का कार्य कर सकती है। यह प्रभाव विसंबद्धता कहलाता है क्योंकि एक आदर्श नव अध्यारोपण संबद्ध या संसक्त होता है। इस तरह परिवेश के साथ किसी वस्तु की सूक्ष्म अंत:क्रिया जैसे किसी एकल फोटॉन या वायु के अणु के वस्तु से टकराकर लौटने मात्र से ही तेजी के साथ विसंबद्धता की प्रक्रिया आरंभ हो जाती है, जो उस अध्यारोपण को अप्रेक्षणीय बना देती है। यह उसी तरह से ही है जैसे कि परिवेश प्रेक्षक की तरह कार्य कर तरंग फलन के निपात का कारण बनता है। दूसरे शब्दों में कहें तो विसंबद्धता एक ऐसे प्रभाव को जन्म देती है जो निपात जैसा ही प्रतीत होता है।

विसंबद्धता हमारे लिए इसकी व्याख्या प्रस्तुत करती है कि अपने आस–पास के परिवेश में क्वांटम अध्यारोपण हमें सामान्यतया अवलोकित क्यों नहीं होते हैं। यह इसलिए नहीं कि किसी खास आकार से बड़ी वस्तुओं के लिए क्वांटम यांत्रिकी तात्विक रूप से काम करना बंद कर देती है। बल्कि स्थूल वस्तुओं, जैसे बिल्लियों आदि को उनके परिवेश से इस कदर पृथक्कृत रख पाना कि विसंबद्धता का उन्हें शिकार न होना पड़े, असंभव–सा ही है। इसके बरक्स, सूक्ष्म कणों, जैसे इलेक्ट्रॉन, परमाणु आदि को उनके परिवेश से अलग रख पाना अपेक्षाकृत काफी सरल होता है और इस कारण वे अपना क्वांटम व्यवहार बरकरार रखते हैं।

''प्रच्छन्न चरों'' की अजीबोगरीब समस्या

अनेक भौतिकीविदों ने इसके समर्थन में अपना तर्क रखा कि किसी भी निकाय के बारे में पूर्ण जानकारी उसको वर्णित करने वाले तरंग फलन में होती है पर तथाकथित प्रच्छन्न चर कहलाने वाले कुछ ऐसे कारक होते हैं जो किसी निश्चित मापन के परिणाम का निर्धारण करते हैं। सन् 1960 के दशक के मध्य में जान एस. बेल ने यह प्रदर्शित किया कि अगर प्रच्छन्न चरों का अस्तित्व है तो प्रयोगात्मक रूप से प्रेक्षित संभावनाओं के मान कुछ खास सीमाओं, जिन्हें ''बेल की असमताओं'' की संज्ञा दी जाती है, से कम होने चाहिएं। अनेक वैज्ञानिक दलों द्वारा किए गए प्रयोगों द्वारा यह बात सामने आई कि इन असमताओं का उल्लंघन होता है। उनके सामूहिक आंकड़े निश्चित तौर पर प्रच्छन्न चरों के अस्तित्व की संभावना के विरुद्ध इंगित करते पाए गए। अधिसंख्य वैज्ञानिकों के लिए ही क्वांटम यांत्रिकी की मान्यता संबंधी किसी भी संदेह को इसने दूर कर दिया।

लेकिन, विगत कुछ वर्षों में प्रच्छन्न चरों की पुन: वापसी हो गई लगती है। इसके लिए नीदरलैंड स्थित यूनीवर्सिटी ऑफ यूटरेक्ट से संबद्ध नोबेल पुरस्कार विजेता जेरार्ड 'टी हुफ्ट, जो युगांतरकारी परिकल्पनाओं के साथ छेड़–छाड़ करने के लिए प्रसिद्ध हैं, मुख्य रूप से जिम्मेदार हैं। उनका तर्क है कि क्वांटम और चिरसम्मत यांत्रिकी के बीच मुख्य अंतर सूचना की हानि है। एक चिरसम्मत निकाय में क्वांटम निकाय की तुलना में अधिक सूचना मौजूद होती है क्योंकि चिरसम्मत चर कोई भी मान लेने के लिए स्वतंत्र हैं जबकि क्वांटम चरों के मान विविक्त होते हैं। अत: किसी चिरसम्मत निकाय को क्वांटम निकाय में रूपांतरित होने के लिए इसमें समाहित सूचना की हानि आवश्यक है जो घर्षण या अन्य क्षयकारी बलों द्वारा ही स्वाभाविक रूप से संभव है।

अगर भिन्न गति से कुछ गेंदों को किसी आकाशचुंबी इमारत से नीचे गिराया जाए तो वायु घर्षण के चलते वे सभी गेंदें अंतत: एक समान अंतिम वेग (टर्मिनल वेलोसिटी) को प्राप्त होती हैं। धरती पर स्थित किसी प्रेक्षक को उन गेंदों के आरंभिक वेग संबंधी जानकारी नहीं हो पाएगी क्योंकि उनके आरंभिक वेगों का अंतर लुप्त हो जाता है। इस तरह गेंदों के आरंभिक वेग संबंधी जानकारी एक प्रच्छन्न चर ही है। इसी तरह अगर यह ब्रह्मांड किसी अज्ञात किस्म के घर्षण द्वारा प्रभावित है तो क्वांटम यांत्रिकी हमें इस तथ्य की जानकारी देती है कि घटनाओं के परिणाम सभी संभावनाओं को व्यक्त न कर केवल विविक्त मान ही ग्रहण कर सकते हैं। अत: 'टी हुफ्ट का शिद्दत से यह मानना है कि प्रकृति अपने अत्यंत विशद स्तर पर चिरसममत हो सकती है लेकिन फिर भी क्वांटम यांत्रिकीय व्यवहार का प्रदर्शन कर सकती है। क्या इसका आशय यह है कि क्वांटम यांत्रिकी एक 'छलावा' मात्र है; क्योंकि, जैसा कि आइंस्टीन का मानना था, विचित्र परिणामों के पीछे ब्रह्मांड आखिरकार चिरसम्मत भौतिकी के प्रागनुभूत सिद्धांतों के अनुसार ही कार्य करता है इंग्लैंड के शेफील्ड विश्वविद्यालय से जुड़े कार्स्टन वान द ब्रुक के अनुसार कण अजीबोगरीब क्वांटम ढंग से व्यवहार करते हैं क्योंकि छिपी व्यवस्था को या तो हम अवलोकित नहीं करते या कर पाने में सक्षम नहीं हो पाते हैं। जेरार्ड 'टी हुफ्ट का कहना है कि प्रकृति घर्षण या क्षय के चलते क्वांटम यांत्रिकीय व्यवहार का प्रदर्शन करती है। घर्षण के स्रोत, जो चिरसम्मत निकायों को क्वांटम निकायों में रूपांतरित कर देता है, के बारे में वान द ब्रुक का यह मानना है कि गुरुत्व के साथ इसका संबंध होना चाहए। एक कदम और आगे बढ़ते हुए ब्रुक ने यह सुझाव भी रखा है कि प्रबल गुरुत्वीय क्षेत्र क्वांटम यांत्रिकी के नियमों में परिवर्तन ला सकता है।

चाहे जो भी हो, क्वांटम जगत में कुछ न कुछ अजीबोगरीब अवश्य है। जैसा कि फुक्स ने लिखा है : ''यह विश्व किसी एक ढंग का नहीं है क्योंकि यह अभी भी सृजन की प्रक्रिया से गुजर रहा है, इसमें निरंतर परिवर्तन हो रहा है।'' क्वांटम जगत संबंधी हमारी समझ के बारे में भी स्पष्टतया यही बात कही जा सकती है।

संदर्भ :

1. बेल, जे. एस., *स्पीकेबल एंड अनस्पीकेबल इन क्वांटम मैकेनिक्स : कलेक्टेड पेपर्स ऑफ क्वांटम मैकेनिक्स* (पुनर्मुद्रित संस्करण), कैंब्रिज : कैंब्रिज यूनीवर्सिटी प्रेस, 1989।
2. ब्लासोन, एम., जिज्बा, पी. और विटिएलो, जी. *डिसिपेशन एंड क्वांटाइजेशन; फिजिक्स लैटर्स ए* , खंड 287, संख्या 3–4, पृष्ठ 205–210, 2001।
3. चंदा, रजत, क्वांटम मिस्ट्री, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, 1999।
4. आइंस्टीन, ए., *बॉर्न–आइंस्टीन लैटर्स*, अनुवाद : आइरिन बॉर्न, लंदन : मैकमिलन, 1971।
5. क्लेपनर, डी. तथा जैकिव, आर., *वन हंड्रेड इयर्स ऑफ क्वांटम फिजिक्स, साइंस*, खंड 289, पृष्ठ 893–898, 2000।
6. मॉसर, जार्ज, *वास आइंस्टीन राइट? साइंटिफिक अमेरिकन*, पृष्ठ 88–91, 2004।
7. टेगमार्क, मैक्स तथा ह्वीलर, जॉन ए., *100 इयर्स ऑफ क्वांटम मिस्ट्री, साइंटिफिक अमेरिकन*, पृष्ठ 68–75, 2001।

अनुवादक : आभास मुखर्जी

मूत्र–पथ के संक्रमण को मात

❑ डॉ. यतीश अग्रवाल
ई–मेल : dryatish@yahoo.com

एक सुबह आप उठते हैं और तीव्र लघुशंका से छुटकारा पाने के लिए सीधे बाथरूम की ओर भागते हैं। मूत्र त्याग के दौरान आपको अपनी पेल्विस यानी श्रोणि के निचले भाग में तकलीफदेय जलन महसूस होती है। मूत्र धुंधला नज़र आता है और उसमें से बदबू भी आ रही होती है। यह स्थिति कई दिनों तक प्रातः काल बनी रहती है और इस तकलीफ का अन्तिम खतरनाक संकेत होता है हल्के गुलाबी रंग का मूत्र त्याग। ऐसे में आप घबरा जाते हैं और यह नहीं तय कर पाते कि करना क्या है?

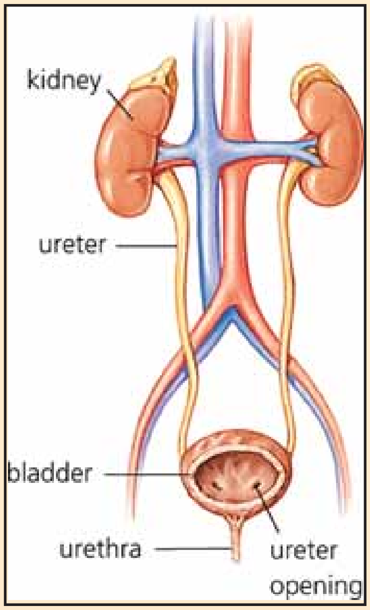

यह सारा घटनाक्रम मूत्र पथ के संक्रमण यानी यूटीआई का विशिष्ट संकेत है। यह काफी दर्दनाक एवं कष्टप्रद अवस्था होती है और इससे आपके मूत्रीय तंत्र का कोई भी भाग प्रभावित हो सकता है, जैसे – मूत्राशय, मूत्रमार्ग, मूत्रवाहिनी या गुर्दे। हालांकि, मूत्राशय या मूत्रमार्ग का संक्रमण आमतौर पर देखा गया है। अगर यह संक्रमण गुर्दों को भी अपने चपेट में ले लेता है तो यह एक गंभीर स्वास्थ्य समस्या बन सकती है।

महिलाओं में यूटीआई का प्रकोप कुछ ज्यादा ही देखा गया है। हर पांच मं से एक महिला अपने जीवनकाल में एक बार इस तकलीफ को जरूर झेलती है। पुरुषों में यूटीआई होने का खतरा कम जरूर होता है परन्तु कुछ खास परिस्थितियों में वह इस संक्रमण की चपेट में आ सकते है। बच्चे, विशेषकर लड़कियां इस रोग से ग्रस्त हो सकती हैं।

इस संक्रमण के प्रथम लक्षण दिखाई देते ही तुरंत चिकित्सक से सलाह लेकर अपने को सभी जोखिमों से बचाएं।

यूटीआई क्या है?

मूत्र पथ के एक या एक से अधिक भाग में जीवाणुओं की अत्यधिक संख्या होने के परिणामस्वरूप मूत्र पथ का संक्रमण यानी यूटीआई होता है। यह जीवाणु निचले मूत्रपथ में जमा हो सकते हैं। अगर ये जीवाणु बड़ी संख्या में मूत्राशय पर हमला करते हैं तो मूत्राशयशोथ यानी सिस्टाईटिस हो सकता है और अगर यह आक्रमण मूत्रमार्ग पर हो तो मूत्रमार्ग शोथ हो सकता है।

कई बार जीवाणुओं का हमला ऊपरी मूत्रमार्ग पर भी हो सकता है। ऐसे में गुर्दे के संक्रमण की संभावना बनी रहती है जिसे गौणिकावृक्कशोथ कहते हैं, जबकि मूत्रवाहिनी के शोथ को गवीनीशोथ कहा जाता है।

आमतौर पर निचले पथ का संक्रमण ऊपरी मूत्र पथ के संक्रमण से कम खतरनाक होता है। ऊपरी मूत्र पथ में गुर्दे के खराब होने की संभावना होती है।

कारण

मूत्र पथ में जीवाणु तीन मार्गो से पहुंच सकते हैं :

- महिलाओं में इस संक्रमण के होने का मुख्य कारण है, जीवाणुओं का मूत्रमार्ग के द्वार से मूत्रीय तंत्र में प्रवेश करना। मूत्र मार्ग का द्वार योनि और गुदा के समीप स्थित होता है और इस कारण इस भाग के जीवाणु मूत्र की बूंदों के साथ मिलकर वापस मूत्रपथ के अन्दर जा सकते हैं। ऐसी आशंका रहती है कि जीवाणु बहुत तेजी से अपनी संख्या में वृद्धि करके मूत्राशय तक पहुंच जाते हैं और फिर मूत्राहिनी को संक्रमित करते हुए जा पहुंचते हैं, गुर्दो तक। करीब 90 प्रतिशत यूटीआई इश्चिरिशचिया कोलाई (E.Coli) नामक जीवाणु द्वारा होते हैं। यह जीवाणु आमतौर पर अहानिकारक रूप में हमारी आंतों तथा मल में पाया जाता है।
- गुर्दे को पहुंचने वाले रक्त के द्वारा शरीर के दूसरे हिस्सों से भी संक्रमण गुर्दो तक आ सकता है, उदाहरण के लिए हड्डियों के संक्रमित भाग द्वारा। हालांकि, गुर्दे इन जीवाणुओं को रोक पाने में असमर्थ होते हैं, इसीलिए इस रास्ते संक्रमण होने की संभावना काफी कम रहती है।
- लसीका यानी लिम्फ वाहिनियों द्वारा भी संक्रमण के फैलने की संभावना बनी रहती है, परन्तु यह भी कम ही होता है।

क्यों हैं महिलाएं ज्यादा खतरे में?

कुछ व्यक्तियों में यूटीआई होने की संभावना अन्य की तुलना में अधिक होती है। महिलाओं में यूटीआई के अधिक प्रकोप का कारण उनकी शारीरिक रचना से संबंधित है। क्योंकि महिलाओं में मूत्रमार्ग पुरुषों की अपेक्षा ज्यादा छोटा है। मूत्राशय के बाहरी भाग से लगभग एक से डेढ़ इंच, और इस कारण जीवाणुओं को मूत्राशय में आसानी से प्रवेश मिल जाता है। जननांगी परतों के बीच का गर्म, नमी वाला क्षेत्र, जीवाणुओं के लिए उपयुक्त स्थान होता है, तथा गलत शौच की आदतों के कारण ये संक्रमण फैल सकता है। अगर मल त्याग के बाद गुदा द्वार की सफाई पीछे से आगे की तरफ की जाए तो जीवाणुओं के मूत्रमार्ग में पहुंचने की संभावना तथा संक्रमण की संभावना बढ़ जाती है।

महिलाओं में यौन क्रियाओं की शुरुआत को, बढ़ते यूटीआई के प्रकोप से जोड़ा जाता है। यौन क्रियाओं के दौरान योनि के साथ लगे मूत्राशय पर भी हल्का आघात पहुंचता है तथा यौन संबंधों के दौरान जीवाणु मूत्रमार्ग तक पहुंच सकते हैं। महिलाओं में विवाह के बाद मूत्राशय के संक्रमण को हनीमून सिस्टाईटिस कहा जाता है।

गर्भ धारण के दौरान भी यूटीआई आरंभ हो सकता है। गर्भावस्था के दौरान शरीर के सामान्य हार्मोन में बदलाव आ जाता है, जिस कारण मूत्रपथ की सामान्य क्रियाओं में फर्क आ जाता है। बढ़े हुए गर्भ के कारण मूत्र के प्रवाह में रुकावट आती है, क्योंकि बढ़े हुए गर्भ के कारण मूत्रवाहिनियों तथा मूत्राशय पर दबाव पड़ता है। कई महिलाओं को प्रसव के दौरान कैथेटर यानी नली लगाने की आवश्यकता पड़ती है। जब भी इस तरह की कोई नली,

कैथेटर आदि मूत्राशय में डाले जाते हैं तो इन बाहरी स्रोतों के द्वारा जीवाणु मूत्रीय तंत्र में प्रवेश कर सकते हैं।

नली को डालने की प्रक्रिया के दौरान गलती से बने किसी भी घाव से संक्रमण हो सकता है। आमतौर पर स्वस्थ महिलाओं के मूत्राशय में एक बार कैथेटर डालने पर 1 से 3 प्रतिशत संक्रमण की संभावना रहती है। परन्तु अगर महिला गर्भवती हो या ज्यादा उम्र की हो या फिर दुर्बल हो, तो उसमें संक्रमण होने का खतरा 10–15 प्रतिशत बढ़ जाता है।

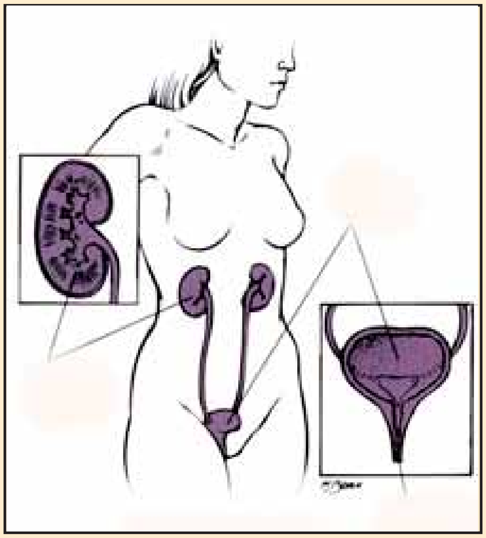

जो औरतें गर्भ निरोधक के रूप में डाईफ्राम यानी पटल का प्रयोग करती हैं, उनमें भी संक्रमण के जोखिम की संभावना अधिक होती है।

रजोवशति के बाद यूटीआई ज्यादातर महिलाओं को अपनी चपेट में ले लेता है, क्योंकि ईस्ट्रोजन हार्मोन की कमी के कारण योनि, मूत्रमार्ग तथा मूत्राशय के निचले भाग के ऊतक ज्यादा पतले और नाजुक हो जाते हैं।

जोखिम के अन्य कारक

कई अन्य परिस्थितियों में भी यूटीआई होने का खतरा बढ़ जाता है तथा इनमें कुछ परिस्थितियां महिलाओं एवं पुरुषों को समान रूप से प्रभावित करती हैं:

- मूत्राशय में नलियों (कैथेटर) का लम्बे समय तक उपयोग
- मूत्रपथ की असामान्य रचना : कई व्यक्तियों के मूत्रपथ में जन्म से ही कुछ विकृतियां होती हैं, जिस कारण मूत्र का प्रवाह धीमा होता है या बाधित होता है। ऐसे व्यक्ति में यूटीआई की संभावना अधिक होती है।
- गुर्दे में पत्थरी : मूत्रपथ में गुर्दे की पत्थरी के कारण रुकावट आ सकती है जिस कारण संक्रमण हो सकता है। सामान्यतया मूत्र त्याग के समय मूत्रपथ की सफाई भी हो जाती है, परन्तु पत्थरी की अवस्था में यह रक्षात्मक प्रणाली अवरुद्ध हो जाती है और पत्थरी के पीछे की ओर मूत्र जमा होता रहता है जिसमें जीवाणुओं के फलने–फूलने के लिए अनुकूल परिस्थितियां होती हैं और यूटीआई बढ़ता जाता है।
- मूत्राशय के तंत्रिका तंत्र में असामान्यता : किसी थक्के या जख्म के कारण मूत्राशय के तंत्रिका तंत्र में गड़बड़ी आ सकती है जिससे मूत्राशय अपना कार्य करना बंद कर देता है और किसी तरह की प्रतिक्रिया न होने से मूत्राशय हौदी या तालाब की तरह बर्ताव करता है, जिसमें जमा मूत्र में जीवाणु पलते व बढ़ते हैं और यूटीआई फैलाते हैं।
- पुरुषों में बढ़ी हुई प्रॉस्टेट ग्रंथि : गुर्दे की पत्थरी की तरह बढ़ी हुई प्रॉस्टेट ग्रंथि भी मूत्र के प्रवाह में बाधा उत्पन्न करती है और इस कारण से भी यूटीआई होने की संभावना बढ़ जाती है।
- वे दवाइयां जो शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को घटाती हैं जैसे – अधिक मात्रा में कॉर्टीसोन का सेवन।

संकेत एवं लक्षण

यूटीआई के लक्षणों में काफी भिन्नता देखी जाती है। ज्यादातर वयस्कों में तीव्र गैर जटिल यूटीआई की पहचान करना ज्यादा आसान होता है। महिलाओं को निचले मूत्रपथ में हुए संक्रमण का तब पता लगता है जब उन्हें बार–बार मूत्र त्यागने जाना पड़ता है। यूटीआई के लक्षण अचानक से उभरते हैं तथा कई बार हल्का बुखार भी आ सकता है। मूत्र त्यागने के दौरान काफी तकलीफ होती है जो तीव्र जलन से लेकर पेट के निचले भाग में दर्द या मूत्रमार्ग के द्वार पर हल्की जलन तक महसूस हो सकती है।

क्योंकि ऊतकों में शोथ होता है, इसीलिए हमेशा ऐसा अहसास होता है कि जैसे मूत्राशय पूरी तरह खाली नहीं है, परन्तु जब अति तीव्र लघुशंका होती है तो मूत्र की कुछ बूंदें ही गिरती हैं।

सामान्य मूत्र का रंग हल्के पीले रंग का तथा पारदर्शी होता है, जबकि यूटीआई में मूत्र का रंग गहरा हो जाता है। उसमें धुंधलापन आ जाता है, बदबू आने लगती है तथा कई बार उसमें कुछ अवशेष आदि भी तैर रहे होते हैं। इन अवशेषों में श्लेष्मा, शोथित ऊतकों में से अलग हुई कोशिकाएं, जीवाणु और मवाद आदि की कोशिकाएं हो सकती हैं। मूत्र पथ की शोथित परतों में से छिटकने वाली लाल रक्त कोशिकाओं के परिणामस्वरूप मूत्र का रंग लाल, भूरा या गुलाबी हो सकता है।

सामान्यतः ऊपरी मूत्र पथ से पहले निचले पथ का संक्रमण होता है। मूत्राशय के अनुपचारित संक्रमणों में से 50 प्रतिशत में गुर्दे के संक्रमण की संभावना होती है। जब गुर्दों में यह रोग फैलता है तो बुखार ज्यादा होता है और शरीर के बढ़े हुए तापमान के साथ–साथ कंपकंपी जैसी ठंड का भी अहसास होता है।

संभावित शारीरिक लक्षणों में शामिल है – थकान, मितली आना तथा कमर में तेज दर्द। गुर्दे बहुत ही मुलायम एवं संवेदनशील हो जाते हैं तथा अंतिम पसली पर किया गया हल्का प्रहार भी अत्यधिक पीड़ा पहुंचाता है। गोणिकावृक्कशोथ से ग्रसित महिलाएं गंभीर बीमार होती हैं और कई बार उन्हें अस्पताल में दाखिल कराने की आवश्यकता पड़ सकती है।

मूत्राशय के संक्रमण के लक्षण एवं संकेत :

• मूत्र त्यागने के दौरान जलन • सामान्य से अधिक मूत्र त्यागने की आवश्यकता महसूस होना • मूत्र त्यागने की प्रबल इच्छा होने के बावजूद त्यागने में असमर्थता • मूत्र से बदबू आती है • धुंधला, गहरा तथा रक्त युक्त मूत्र

निदान

मूत्र पथ के शोथ का निदान परीक्षण एवं मूत्र के कल्चर पर निर्भर करता है। सटीक निदान के लिए यह आवश्यक है कि मूत्र को सही प्रकार से मध्य धारा में से लिया जाए और इससे पहले आस–पास की त्वचा, योनि/शिश्नमुंडच्छद तथा गुदा द्वार को साफ कर लेना चाहिए।

मूत्र का सैम्पल या नमूना लेने से पहले, प्रथम कुछ बूंदें गिरा देनी चाहिए। घर में लिया गया मूत्र का नमूना तभी स्वीकार करने योग्य है अगर उसे तुरंत प्रयोगशाला तक पहुंचाया जाए। यदि ऐसा संभव न हो तो नमूने को फ्रिज में ठंडा रखें क्योंकि हर 30 मिनट में मूत्र में जीवाणुओं की संख्या दुगुनी हो जाती है, जिससे संक्रमण का निदान गलत हो सकता है।

निदान से पहले, जीवाणुओं की संख्या उपयुक्त होनी चाहिए। आमतौर पर मूत्र के एक मि.लि. में 100,000 या उससे अधिक जीवाणु होने पर संक्रमण माना जाता है। मूत्र के कल्चर के द्वारा संक्रमण के उपचार के लिए विशिष्ट एंटीबायोटिक का भी पता लग जाता है। हालांकि, मूत्र के कल्चर से उपचार पर खर्चा तो बढ़ जाता है परन्तु यह एक जरूरी प्रक्रिया है।

मूत्र का परीक्षण भी कल्चर द्वारा तय किए गए निदान को स्थापित करने में मदद करता है। इसके द्वारा मूत्र में प्रोटीन की उपस्थिति और सूक्ष्मदर्शी द्वारा रक्त, मवाद तथा जीवाणुओं की उपस्थिति भी पता की जा सकती है। मरीज के लक्षणों और मूत्र में परीक्षण के आधार पर उपचार तय किया जा सकता है।

उपचार तय करने के लिए कल्चर की रिपोर्ट आने का इंतजार करने की आवश्यकता नहीं होती है।

संभावित जटिलताएं :

यूटीआई को अनुपचारित न छोड़ें। ऐसा करने से गुर्दो में कभी न ठीक हो सकने वाले नुकसान हो सकते हैं। लगातार बने रहने वाला संक्रमण भले ही कितना मामूली हो, इससे गुर्दे में जख्म, अपरिपक्व वृद्धि तथा कई बार गुर्दे पूरी

तरह बेकार हो सकते हैं। इसलिए यह अति आवश्यक है कि तुरन्त चिकित्सक से सलाह लें।

गर्भवती महिलाओं के मूत्र में जीवाणुओं का पाया जाना काफी गंभीर हो सकता है, अगर ऊपरी मूत्र पथ का संक्रमण हो तो अपरिपक्व प्रसव हो सकता है।

उपचार :

उपचार मुख्य रूप से हमलावर जीवाणुओं को खत्म करने के लिए एंटीबैक्टीरियल यानी प्रतिजीवाणु द्वारा उपचार पर केन्द्रित होता है। यह एंटीबायोटिक या तो मुंह के द्वारा या फिर नसों के द्वारा दी जाती है। किसी भी दवाई से अगर एलर्जी हो तो चिकित्सक को पहले बता दें। एंटीबायोटिक तुरन्त लक्षणों से आराम दिलाती है परन्तु पूर्ण रूप से संक्रमण खत्म करने में 7 से 14 दिनों का समय लग सकता है। लक्षणों के खत्म हो जाने के बाद भी चिकित्सक द्वारा बताए गए इलाज का पूरा पालन करें और बताई गई पूरी अवधि तक दवाइयां लेते रहें। उपचार के अंत में मूत्र का कल्चर जरूर करवाएं और सकारात्मक रिपोर्ट आने पर यह निश्चित हो जाता है कि संक्रमण ठीक हो गया है।

यूटीआई से लड़ने के लिए उपयुक्त मात्रा में पानी का सेवन अति आवश्यक है। मूत्र पथ पर बार–बार पानी के प्रवाहित होने से जीवाणुओं की संख्या में कमी लाई जा सकती है। एक अच्छा तरीका यह है कि हर दवाई की खुराक के साथ एक गिलास पानी अवश्य पीएं और हर खुराक के बीच में भी एक गिलास पानी पीएं।

जब यूटीआई के लक्षण अत्याधिक तीव्र और विषैले हों, तो यह ऊपरी मूत्र पथ के संक्रमण का द्योतक होता है तथा इसमें तुरन्त उपचार की आवश्यकता होती है। ऐसी अवस्था में उपचार तो एंटीबायोटिक और अतिरिक्त तरल पदार्थ द्वारा ही किया जाता है, परन्तु कई बार नसों के द्वारा भी दवाई और अन्य पदार्थ चढ़ाए जाते हैं। जब संक्रमण की तीव्रता में कमी आ जाती है तो मुंह द्वारा दवाइयों का सेवन शुरू किया जा सकता है।

रोकथाम

यूटीआई होने की संभावना को कम करने के लिए कुछ कदम उठाए जा सकते हैं। निम्नलिखित से मुख्यत: महिलाओं को जरूर फायदा होगा :

अधिक मात्रा में तरल पदार्थो का सेवन : रोजाना 8–10 गिलास तरल पदार्थ, मुख्य रूप से पानी जरूर पीएं। इससे जीवाणुओं को बाहर निकालने में मदद मिलेगी और मूत्र पथ भी साफ रहेगा।

बाथरूम का उपयोग बार–बार करें : जब भी मूत्र त्याग की इच्छा हो तो तुरन्त बाथरूम जाएं, क्योंकि मूत्राशय को लगातार खाली करते रहने से जीवाणुओं को अपनी संख्या बढ़ाने का मौका नहीं मिल पाता है।

आगे से पीछे की ओर साफ करें : बचपन से ही बालिकाओं को स्वच्छता के सही तरीके सीखाने चाहिए। हमेशा याद रखें कि मल त्याग के बाद अगर टायलेट पेपर से गुदा द्वार को साफ करें तो हमेशा एक बार में आगे से पीछे की ओर साफ करें, कभी भी पीछे से आगे की ओर नहीं। पानी से साफ करते समय भी इस बात का ध्यान रखें। मूत्र त्याग एवं मल त्याग के बाद ऐसा करने से गुदा क्षेत्र के जीवाणुओं को योनि तथा मूत्रमार्ग पर जाने का मौका नहीं मिलेगा।

फव्वारे से स्नान करें : टब में नहाने की अपेक्षा फव्वारे में स्नान करना ज्यादा श्रेयष्कर है, क्योंकि ऐसा करने से जीवाणु पानी के साथ तुरंत बह जाते हैं, जबकि बाथ टब में बैठकर नहाने से गुदा के जीवाणु मूत्रमार्ग के सम्पर्क में आ सकते हैं।

जलन पैदा करने वाले उत्पादों के उपयोग से बचें : दुर्गन्ध नाशक स्प्रे या स्नान के उपयोग में लाए जाने वाले उत्पाद जैसे बबल बाथ यानी झाग से स्नान तथा महिलाओं के स्वच्छता स्प्रे व जनन क्षेत्र में लगाने से कई महिलाओं के जननांगों में जलन हो सकती है और इस शोथ में संक्रमण की संभावना बढ़ जाती है। अगर आप किसी भी ऐसे उत्पाद के लिए संवेदनशील हैं तो तुरंत उसका उपयोग बन्द कर दें।

सूती पहनें : कॉटन यानी सूती कपड़े के बने अन्तरीय वस्त्र सामान्य नमी एवं स्रावों को नायलॉन की अपेक्षा सोखने की अधिक क्षमता रखते हैं और इस तरह जीवाणुओं के फलने–फूलने के प्रतिकूल वातावरण बनाते हैं।

यौन संबंधों के बाद मूत्राशय की सफाई पर ध्यान दें : यौन संबंधों से पहले स्नान करने से संक्रमण की संभावना कम हो जाती है। यौन संबंध के तुरंत बाद स्त्री को अपने मूत्राशय को खाली करना चाहिए जिससे बाहर से आया कोई भी जीवाणु बह जाए।

एंटीबायोटिक का सेवन करें : अगर हर बार यौन संबंधों के बाद यूटीआई होता हो और सामान्य स्वच्छता के सिद्धांतों के पालन द्वारा आराम नहीं मिलता हो तो यौन संबंधों के तुरन्त बाद एंटीबायोटिक की एक गोली का सेवन करने से संक्रमण से बचाव होता है। स्त्रियों की यह समस्या तुरंत अपने चिकित्सक को बतानी चाहिए। चिकित्सीय सलाह से शारीरिक संबंधों में थोड़ा–बहुत या कोई भी फर्क नहीं आता है।

अपना ध्यान स्वयं रखें :

मूत्र पथ का शोथ कष्टदायक हो सकता है, इसलिए जब तक एंटीबायोटिक उसे पूरी तरह ठीक न कर दें तब तक निम्नलिखित बातों को अपना कर तकलीफ को कम किया जा सकता है :

गर्म पैड से सिंकाई : कई बार पेट पर सिंकाई करने से मूत्राशय में दबाव या दर्द से राहत मिलती है।

तरल पदार्थो का खूब सेवन करें : तरल पदार्थ खूब पीएं, परन्तु कॉफी, मदिरा और सॉफ्ट पेय पदार्थ जिनमें नींबूवर्गीय फलों का रस हो या कैफीन हो, इनके सेवन से बचें। क्योंकि ये पदार्थ मूत्राशय में जलन पैदा कर सकते हैं और इससे बार–बार मूत्र त्यागने के लक्षण में बढ़ोतरी होगी।

अपने चिकित्सक से कुछ न छुपाएं : अगर आपको मूत्राशय का संक्रमण बार–बार होता है तो अपने चिकित्सक से सलाह लें।

अनुवादक : डॉ. रमेश दत्त शर्मा

प्रकाश का यथार्थ मापन

❑ बिमान बसु
ई–मेल : bimanbasu@gmail.com

लगभग 150 वर्षों पहले अंग्रेज भौतिकविद् जेम्स क्लार्क मैक्सवेल ने यह सिद्ध किया था कि प्रकाश विद्युत–चुम्बकीय विकिरण है जो तरंग की भांति गति करता है। प्रकाश के इस दोलक गुण नें मैक्सवेल के विद्युत–चुम्बकीय सिद्धांत को प्रमाणित किया। इसके पश्चात सन् 1905 में जर्मन मूल के अमेरिकी भौतिकविद अल्बर्ट ने प्रकाश–विद्युत् प्रभाव की व्याख्या करने के लिए यह माना कि प्रकाश कण की भांति भी व्यवहार करता है। प्रकाश की इस द्वैत प्रकृति को समझने के लिए स्थूल सिद्धांतों – जिससे इसके कला गुणों को समझा जा सकता है एवं सूक्ष्म सिद्धांतों – जिससे फोटोन एवं उसके अवशोषक पदार्थों के मध्य परस्पर क्रियाओं के लिए जिम्मेदार है, दोनों की आवश्यकता होती है। मैक्सवेल सिद्धांत स्थूल सिद्धांत का कार्य करता है जबकि क्वांटम विद्युत गतिकी सूक्ष्म सिद्धांत की व्याख्या की जाती है। सन् 2005 का भौतिकी में नोबेल पुरस्कार संयुक्त रूप से दो भौतिकविदों – रॉय जे. ग्लॉबर, हारवर्ड यूनिवर्सिटी, कैम्ब्रिज, मैसच्यूटस और जॉन एल. हाल यूनिवर्सिटी ऑफ कोलोरेडो एवं नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ स्टेंडर्ड एण्ड टेक्नोलॉजी एवं एक जर्मन भौतिकविद् – थियोडोर डब्लू हैंच, मैक्स प्लांक इस्टीट्यूट फॉर क्वानटिनोटिक गारचिंग एण्ड लुडविग मैक्समिलेएन – यूनिवर्सिटी मुनरिच को उनके द्वारा प्रकाशीय घटनाओं को सुपरिभाषित करने के लिए यह पुरस्कार दिया गया। पुरस्कार की आधी राशि ग्लॉबर को उनके ''प्रकाशीय संसक्तता के क्वांटम सिद्धांत'' में योगदान के लिए एवं शेष आधी राशि का विभाजन संयुक्त रूप से हॉल एवं हैंस के मध्य उनके ''लेसर आधारित यथार्थ स्पेक्ट्रोस्कोपी के उनके योगदान के लिए दिया गया, जिसमें प्रकाशीय आवृत्ति काम्ब तकनीकी भी सम्मिलित हैं।''

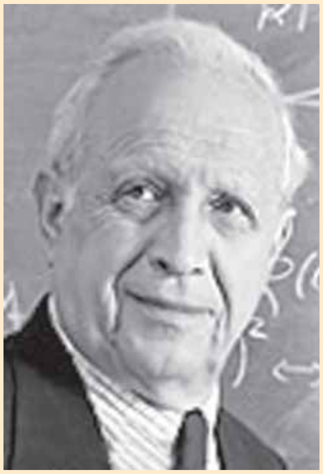

रॉय जे. ग्लॉबर

विद्युत–चुंबकीय परिघटना आधुनिक प्रौद्योगिकी का अभिन्न हिस्सा है। इसके दोलनीय गुण का प्रयोग मुख्यतः सभी वैद्युत मोटरों एवं हमारे संचार की युक्तियों में किया जाता है। रेडियो, टीवी, रिसीबर और मोबाइल फोन आदि सभी युक्तियां विकिरण का सुपरिभाषित आवृत्ति एवं कला गुणों में कायम रखने की क्षमता पर आधारित होती हैं। वहीं दूसरी ओर युक्तियां जो विद्युत् चुम्बकीय विकरणों का संसूचक करती हैं, विकिरण ऊर्जा के द्रव्यमान माध्यम द्वारा विकिरण ऊर्जा के अवशोषण पर निर्भर करती है। यह ऊर्जा पैकेटों में संचरित होती है जिसे फोटॉन कहा जाता है। विकिरण के एक फोटॉन का अवशोषण उत्सर्जन का कारण बनता है जो ठोस पदार्थ से केवल एक प्रकाश उत्सर्जी इलेक्ट्रॉन को मुक्त करता है। इस प्रकाश उत्सर्जी प्रवर्धित एवं संसूचित किया जा सकता है। अतः यह ससूंचक फोटो इलेक्ट्रॉन की गणना करता है, न कि फोटॉन और उसके व्यवहार की। इस प्रकार हमें सूचना अप्रत्क्ष रूप में प्राप्त होती है। अवलोकन की इस प्रक्रिया में फोटॉन का अवशोषण तो अवश्य होता है लेकिन उसके बाद यह विद्यमान नहीं रहता। सभी प्रकाश वैद्युतिकी युक्तियां इस सिद्धांत पर कार्य करती हैं।

फोटॉन का संसूचक द्वारा अवशोषण किस तरह होता है इसकी व्याख्या सटीक ढंग से सन् 1963 तक नहीं हुई थी। सन् 1963 में ग्लॉबर ने फिजिक्स रिव्यू नामक पत्रिका में शोध पत्रों की श्रृंखला प्रकाशित करके यह दिखाया कि फोटॉन–संसूचक प्रक्रिया की व्याख्या करने के लिए किस तरह क्वांटम सिद्धांत का सूत्रण सृजित किया जाए। ग्लॉबर ने प्रकाशीय संसक्तता के क्वांटम सिद्धांत के मूल स्वरूप को प्रस्तुत किया। उनके इस कार्य ने प्रकाशीय तापसूत्र एवं वर्तमान में प्रयुक्त संसक्त स्रोतों जैसे लेजर एवं क्वांटम एंप्लीफायर (प्रवर्धक) के व्यवहार के अन्तर को समझने में मदद की। संसूचक द्वारा फोटॉन के अवशोषण की व्याख्या के लिए ग्लॉबर ने अपने सिद्धांत द्वारा विद्युत गतिकी वैधिकता को आधार बनाया। ग्लॉबर ने यह भी प्रदर्शित किया कि इस तरह के कई संसूचकों के सहसंबंध से उच्च क्रम का सहसंबंध प्राप्त किया जा सकता है जिससे क्वांटम विकिरण के अभिलक्षणों को दर्शाया जा सकता है। कई शोधकर्ताओं ने ग्लॉबर सिद्धांतों के परिणामों को प्रकाश भौतिकी परीक्षणों की व्याख्या करने में उपयोग किया। इसके फलस्वरूप क्वांटम प्रकाशीय क्षेत्र विकसित हुआ। विकसित होने के समय से ही यह विविधताओं एवं चुनौतियां भरा अनुसंधान क्षेत्र रहा है। क्वांटम प्रकाशीय के परीक्षणों में एकल फोटॉन और कुछ परमाणु स्तर तक परीक्षण किया जा सकता है। इससे चरम स्थायित्व वाली युक्तियों का विकास भी संभव हुआ है।

जॉन एल. हाल

थियोडोर डब्लू हैंच

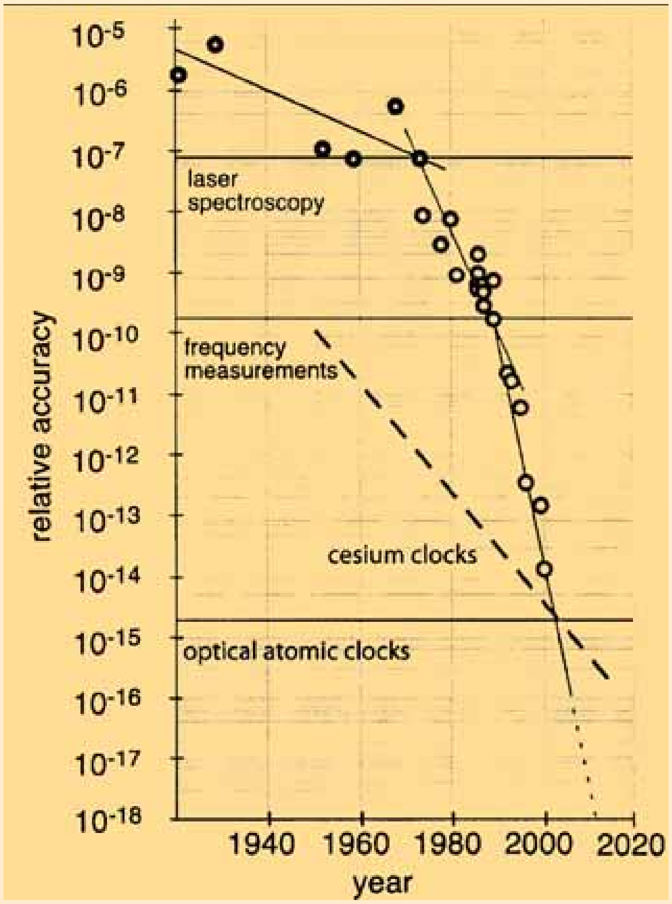

परीक्षण तकनीकियों के विकास के साथ–साथ परस्पर यथार्थ मापन वाली स्पेक्ट्रोस्कोपी का विकास

कम तीव्रता की सीमा में बहुत ही कम फोटॉन सम्मिलित होते हैं और इसका अनुप्रयोग सुरक्षित क्वांटम कम्युनिकेशन में किया जा सकता है, जैसे कि क्वांटम कम्प्यूटिंग एवं उच्च यथार्थ परीक्षणों में अति कमजोर सिग्नलों की रिकार्डिंग। इन सभी चीजों के लिए मूल सिद्धांतों की अच्छी समझ होना आवश्यक है। इसका कारण यह है कि क्वांटम प्रभाव यह तय कर देता है कि विशेष परिस्थिति में मापन को किस स्तर तक निर्धारित किया जाए। अनचाही विद्युत सिग्नलों को तो दूर किया जा सकता है मगर क्वांटम सिग्नलों को नहीं। क्वांटम प्रकाशीय में क्वांटम सिद्धांतों के विभिन्न पहलुओं की परिमाणिकता की संभावना होती है। इस प्रकार यह क्वांटम प्रकाशीय क्षेत्र का दूसरा अनुपयोगी क्षेत्र हो सकता है।

नयी संरचनाओं एवं परिघटनाओं द्वारा यथार्थ मापन के उद्घाटन से स्पेक्ट्रोस्कोपी में प्रगति संभव हुई है। यह बात विशेषकर एटोमिक स्पेक्ट्रोस्कोपी के लिए सत्य है, जिसमें स्पेक्ट्रल विभेदन बढ़ाने पर परमाणु संरचना का अवलोकन (इलैक्ट्रानिक चक्रण के कारण) अति सूक्ष्म संरचना (नाभिकीय चक्रण के कारण) और आयतनिक समस्थानिक विस्थापन (तत्व के समस्थानिक नाभिकी पर विभिन्न आवेशों के वितरण के कारण) सम्मिलित है। अधिक से अधिक यथार्थ मापन एवं विभेदन से अंततः नयी परिघटना विकसित होती है। प्रकाशीय संक्रमण आवृत्तियों की शुद्धता के मापन से अच्छी आण्विक घड़ियों को बनाया जा सकता है जिसके फलस्वरूप अधिक अच्छे ग्लोबल पोजिशिनिंग सिस्टम (जीपीएस) का निर्माण संभव हो सकता है। इसके फलस्वरूप अच्छे स्पेस नेविगेशन एवं खगोलीय टेलीस्कोप पुंजों को नियंत्रित करने की विधियों में भी सुधार आ सकेगा। हाल एवं हैंस का कार्य इसी क्षेत्र से संबंधित है।

लेसर आधारित यथार्थ स्पेक्ट्रोस्कोपी एवं प्रकाशीय आवृत्तियां काम्ब तकनीकियां

लम्बाई एवं समय की इकाइयों की परिभाषाओं में निरन्तर विकास हुआ है जो पृथ्वी एवं उसकी गति से संबंधित रहा है। सन् 1960 में मीटर की 86 kr की स्पैक्ट्रल लाइन की कुछ तरंगदैर्घ्य की निर्दिष्ट संख्या के रूप में परिभाषित किया गया था और सन् 1967 में दूसरी बार इसे 133 Cs के अतिसूक्ष्म विस्थापन से उत्सर्जित विकरण के 9,192631770 दोलनों से परिभाषित किया गया। मापन की इन सुधारात्मक विधियों से प्रकाश की गति के अति शुद्धता आवृतियों की गुणवत्ता और स्थायी विकिरण स्रोत की तरंगदैर्घ्य से मापा जा सकता है। दुर्भाग्यवश मीटर की परिभाषा स्पेक्ट्रल लाइन पर होने के कारण मापन की प्रक्रिया सीमित हो गयी। हॉल एवं दूसरे वैज्ञानिकों ने मीटर को नये तरीके से परिभाषित किया जिसमें मीटर का सम्बंध सेकेंड से था। मीटर को प्रकाश द्वारा 1/299,792,458 सेकेंड भाग में चली गयी दूरी द्वारा परिभाषित किया गया है। परन्तु प्रकाशीय आवृत्तियों के यथार्थ मापन द्वारा यह समस्या दूर हो गयी है और मीटर की नयी परिभाषा कई प्रयोगों के लिए उपयोग में आने लगी। प्रकाशीय आवृत्तियों में उत्कर्ष मापन का नया तरीका खोजना आवश्यक हो गया।

नये उच्च यथार्थ मापन पद्धति जिसे 'प्रकाशीय आवृत्ति काम्ब पद्धति' कहा गया, ने अरोहण समस्या को सरल तरीके से सुलझा दिया। हॉल एवं हैंस द्वारा विकसित इस नयी मापन पद्धति में लेसर का उपयोग किया गया। यह निरन्तर उपयोगी लेजर अपने में उपस्थित ग्रेविटी मोड और उसकी प्रतिबद्धता के संबंधों पर आधारित थी। जिससे बार–बार दोहरा सकने वाली सूक्ष्म तरंगों की शृंखला को उत्पन्न किया जा सकता था। 1990 के अंत में हैंस और उनके सहयोगियों ने काम्ब फ्रीक्वेंसी संरचना का उपयोग मोड–लॉक्ड टिटेनियम सेफायर लेसर में किया गया। जिससे अंततः सीजीएम घड़ी का निर्माण हुआ। हाल एवं हैंस की यथार्थ प्रकाशीय लेसर द्वारा यथार्थ मापन का स्तर 10^{-15} तक बढ़ाया जा सका।

हाल एवं हैंस द्वारा विकसित पद्धति ने स्पेक्ट्रोस्कोपी और ऑप्टिकल आवृत्ति का एक मानक बनाया है जिनको मौलिक व्यवहार में लाया गया। इस पद्धति के परीक्षण से सिद्धांतों को अधिक उच्च यथार्थ स्तर तक मापा जा सकता है। इस तकनीकी से मौलिक सिद्धांतों का परीक्षण अधिक शुद्धता से किया जा सकता है। जैसे कि स्पेस आइसोट्रॉपी और कणों और प्रति कणों (हाइड्रोजन और एन्टी हाइड्रोजन) के बीच संबंध और मूल स्थिरांकों के अनुगमन को परिभाषित करना संभव हुआ। यह पद्धति ग्लॉबर पॉजिसिंग सिस्टम को परिभाषित करने और बड़े खगोलीय टेलीस्कोपी पुंजों को तुल्यकारी करने और गहन स्पेस नेविगेशन को अधिक शुद्ध बनाने में भी मदद करेगी।

अनुवाद : सुबोध महंती, कपिल त्रिपाठी

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की अभिनव उपलब्धियां

मलेरिया वैक्सीन का प्रभावशाली चिकित्सा परीक्षण

वर्तमान में नयी वैक्सीन पर किए गए चिकित्सीय परीक्षण ने मानव की प्रतिरोधक कोशिकाओं को मलेरिया परजीवी को पहचानने एवं उन्हें मारने के लिए क्रियाशील बनाया है। यह वैक्सीन मानव चूहों के संक्रमित रक्त नमूनों पर प्रभावशाली सिद्ध हुई है।

पाश्चर इंस्टीट्यूट पेरिस के पियरी ड्रूली जिन्होंने अपने किए गए अध्ययन के बाद यह बताया कि यह पहली मलेरिया वैक्सीन का परीक्षण है जिसने वैक्सीन इन्ड्यूज्ड एंटीबॉडी द्वारा एन्टी पैरासाइट क्रियाओं का सफल परीक्षण किया है। मलेरिया–कुछ विशेष प्रकार के मच्छरों द्वारा ले जाया जाने वाला परजीवी–संसार के लगभग 300 मिलियन लोगों को प्रतिवर्ष बीमार कर देता है एवं इससे लगभग 1 मिलियन लोगों की मृत्यु भी हो जाती है। विशेषकर बच्चों की। यह आंकड़े वर्ल्ड हेल्थ आर्गनाइजेशन द्वारा दिए गए हैं। वैक्सीन के विकास में सूक्ष्म परजीवी की अनुकूलनशीलता और जटिलता हमेशा बाधक रही है।

पब्लिक लाइब्रेरी ऑफ साइंस में प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार शोधकर्ताओं की टीम ने एमएसपी–3 पर आधारित वैक्सीन को 30 यूरोपिन व्यक्तियों को दिया जिन्हें कभी मलेरिया नहीं हुआ था। इसके उपरान्त उन सभी व्यक्तियों पर पहले एक माह फिर बाद में 4 महीनों तक निगरानी रखी गयी। इंजेक्शन लगाने के हर एक महीने बाद रक्त का नमूना लिया गया। इन रक्त के नमूनों के परीक्षण की तुलना फ्रेंच व्यक्तियों के रक्त के नमूनों से किए गए जिनमें प्रतिरक्षा विकसित नहीं हुई थी। इसी प्रकार इसकी तुलना मलेरिया के प्रति प्रतिरक्षायुक्त अफ्रीकी व्यक्तियों के नमूनों से भी की गई। जब इसे बैट्रो एवं 77 प्रतिशत एमएसपी–3 एन्टीबॉडी में दिया गया तो सभी नमूनों में मलेरिया के प्रति प्रतिरोधक क्षमता विकसित हो गयी।

स्रोत : साइंटिफिक अमेरिका डॉट कॉम

टाइटन की संरचना पृथ्वी के समान पायी गई

हाइगेन यान, टाइटन की सतह पर जनवरी 2005 को उतरा। इससे प्राप्त आंकड़ों से ज्ञात हुआ कि शनि के चंद्रमा टाइटन का चित्र पृथ्वी के मानचित्र के ठंडे भाग के समान है, जो कार्बनिक यौगिकों के नम बालू से ढका हुआ है और जो द्रव से उत्कीर्ण है। नेचर पत्रिका में यह प्रथम विश्लेषण शोध–पत्रों की श्रृंखला के रूप में प्रकाशित हुआ है।

यद्यपि टाइटन की सतह काफी ठंडी है जिसका तापक्रम -179^0 सेल्सियस है। सौरमंडल का यह ऐसा पिंड है जिसका वातावरण पृथ्वी के समान नाइट्रोजन से भरा है। टाइटन सौरमंडल का बृहस्पति के गेनीमेडी, के बाद दूसरा सबसे बड़ा चंद्रमा है जिस पर पृथ्वी के समान ही जटिल मौसम चक्र, भूमि पर तरल प्रवाह, ज्वालामुखी और खनिजों की विभिन्नता विद्यमान है। वास्तव में इसकी संरचना हमारे ग्रह पृथ्वी की पूर्व संरचना से मिलती–जुलती है। आंकड़ों से यह भी पता चला है कि टाइटन की सतह पर कोहरे की काफी मोटी तह होती है। मिथेन एवं नाइट्रोजन मिलकर टाइटन पर वायुमंडल बनाते हैं। सूर्य की रोशनी में वायु विलेय होकर चंद्रमा का रंग नारंगी कर देते हैं।

हाइगेन ने सतह पर उतरने के पहले लगभग ढाई घंटे तक एवं उतरने के बाद एक घंटे तक आंकड़े एकत्र किए। यान की विभिन्न प्रणालियों में चट्टान की जगह बर्फ, वायुमंडल के मापन, हवा, एयरोसोल, गैस और सतह सम्मिलित है।

स्रोत : साइंटिफिक अमेरिकन डॉट कॉम

कंप्यूटर को प्रतिरक्षित करना

प्रतिरक्षित सॉफ्टवेयरों की सहायता से नुकसान पहुंचाने वाले कंप्यूटर वायरसों को उनके रास्ते में ही रोककर बचा जा सकता है। यह सॉफ्टवेयर वायरस की अपेक्षा अधिक तेजी से प्रसारित होता है। इस प्रणाली में इन्टरनेट की सहायता से ऐसे प्रोग्रामों के सॉटकट का नेटवर्क बनाया जाता है, जो केवल एंटीवायरस प्रोग्रामों का उपयोग करते हैं और इस प्रकार वायरस के आने से पहले ही कंप्यूटर को प्रतिरक्षित कर दिया जाता है। तेलअवीव यूनिवर्सिटी, इजराइल के ईरान शिहिर ने इस समस्या पर कार्य करना उस समय प्रारंभ कर दिया था जब सन् 2003 में ब्लास्टर वायरस पूरे इंटरनेट पर फैल गया था।

एंटीवायरस सॉफ्टवेयर का उद्देश्य स्वस्थ कंप्यूटर को वायरस के संक्रमण से बचाना और पहले संक्रमित हो चुकी फायलों को साफ करना है। टीम ने पूरे समय में वायरस पर कार्य किया और सॉफ्टवेयर पेचिस बनाए। इन पेंचों को कंप्यूटर उपयोगकर्ताओं को अपने कंप्यूटर में वायरस आने से पहले लोड करने के लिए वितरित किया गया। इस योजना में कुछ वायरस एक चरण तक कुछ दिनों तक जा पाते हैं उसके उपरांत वह फैलने के लिए कमजोर पड़ जाते हैं।

स्रोत : नेचर डॉट कॉम

चेहरे की प्रथम प्रत्यारोपित शल्य चिकित्सा

फ्रांस के एक शल्य चिकित्सक ने संसार में प्रथम चेहरे के सफल प्रत्यारोपण का दावा किया है। यद्यपि इस कार्य में पूरा चेहरा सम्मिलित नहीं था। 38 वर्ष की एक महिला जिसका चेहरा कुत्ते के आक्रमण द्वारा बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो गया था, की शल्य चिकित्सा मृत स्त्री के शरीर से ठोढ़ी, ओंठ और नाक को निकालकर प्रत्यारोपित कर दिया गया।

आज की मरीज की स्थित और चेहरे की नक्काशी सामान्य है। यह शल्य चिकित्सा लेऑन स्थित इड्आर्ड हेरोयट हास्पिटल के जीन माइकल डियुबनार्ड द्वारा की गयी।

औरत की चोट इतनी घातक थी कि वह न तो अच्छी तरह बोल सकती थी और न ही कुछ चबा सकती थी। इस गंभीर चोट का इलाज मैक्सीलियोफैसियल सर्जरी पद्धति द्वारा ठीक करना संभव नहीं था। इस कार्य में फ्रांस, अमेरिका और ब्रिटेन के सदस्यों के मध्य पहले करने की दौड़ पर विराम लगा दिया।

स्रोत : न्यू साइंटिस्ट डॉट कॉम

संकलन : कपिल त्रिपाठी

(पृष्ठ 1 का शेष)

फिल्मों का विमोचन

हुए चालीस के दशक के मध्य में प्रो. वैद्य ने विकिरणकारी तारे के बारे में आइंस्टीन की समीकरण को बड़े सुंदर ढंग से व्याख्यायित किया था। इसमें प्रो. वैद्य ने ऊर्जा को विकीर्ण कर रहे तारे के गुरुत्व–क्षेत्र का विवरण प्रस्तुत किया था। यह व्याख्या बड़ी सरल और परिष्कृत है और काल–विवरों के बनने या 'नेकड सिंगुलरिटी' के संदर्भ में गुरुत्वीय–निपात के खगोल भौतिकीय शोधकार्य में इसका व्यापक उपयोग किया जाता है। वस्तुतः आइंस्टीन के समीकरण के ऐसे समाधान इने–गिने ही हैं, जो एक विशेष भौतिक स्थिति पर लागू हो सकें। प्रोफेसर पी.सी. वैद्य इस महान वैज्ञानिक योगदान के अतिरिक्त श्रेष्ठ अध्यापक और शिक्षाविद् के रूप में भी विख्यात रहे हैं। 'गुजरात गणित मण्डल' की स्थापना करके प्रो. वैद्य ने गुजरात में गणित की शिक्षा अभियान संचालित किया।

(बाएं से दाएं) डॉ. विनय बी. काम्बले, प्रो. सी. वी. विश्वेश्वर, श्रीमती नमिता रायचौधरी, प्रो. पी.सी. वैद्य और प्रो. जयन्त नारलीकर

सामान्य आपेक्षिकता एवं गुरुत्व पर वैश्विक परिप्रेक्ष्य में ये दो भारतीय शोधकार्य बड़े गंभीर और ज्वलन्त उदाहरण हैं जो सदा अमर रहेंगे। जहां वैज्ञानिकों की भावी पीढ़ी प्रो. रायचौधरी तथा प्रो. वैद्य के जीवन और कार्य को प्रस्तुत करने वाली इन दोनों फिल्मों से प्रेरणा ग्रहण करेगी, वहीं युवा पीढ़ी को विज्ञान अपनाने की ओर आकर्षित करेगी।

16 नवम्बर 2005 को आइयुका, पुणे में इस खगोल भौतिकी केन्द्र के निदेशक प्रोफेसर नरेश दधीचि ने इन दोनों फिल्मों का लोकार्पण किया। अपने स्वागत–भाषण में उन्होंने इन फिल्मों की संक्षिप्त पृष्ठभूमि प्रस्तुत की। विज्ञान प्रसार के निदेशक डॉ. विनय बी.काम्बले ने अपने व्याख्यान में बताया कि किस तरह 'विज्ञान प्रसार' और 'आइयुका' के संयुक्त प्रयासों से इस फिल्म का निर्माण संभव हुआ। उन्होंने 'विज्ञान प्रसार' के अन्य कार्यकलापों का भी परिचय दिया। प्रोफेसर पी.सी.वैद्य के जीवन और कार्य के बारे में बंगलौर प्लानेटोरियम के निदेशक प्रोफेसर विश्वेश्वर ने प्रकाश डाला। प्रो. ए.के.रायचौधरी के जीवन और कार्य का परिचय प्रोफेसर जयन्त नार्लीकर ने प्रस्तुत किया। इन फिल्मों के लोकार्पण के अवसर पर प्रो. पी.सी. वैद्य अहमदाबाद से पुणे पहुंचे और कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई। इसी प्रकार कोलाकाता से स्वर्गीय प्रो. ए. के. रायचौधरी की जीवनसंगिनी श्रीमती नमिता रायचौधरी पुणे के इस कार्यक्रम में पधारीं। सभी को इस मौके पर प्रो. रायचौधरी की गैरमौजूदगी बहुत खली। लोकार्पण समारोह में श्रीमती नमिता रायचौधरी और प्रो. पी.सी.वैद्य का अभिनंदन किया गया। इसके साथ ही दोनों फिल्मों के निर्माता श्री सुनील शनभाग और श्री सुधीर पलसाने, कैमरामैन को भी इस अवसर पर सम्मानित किया गया। जब वहां इन दोनों फिल्मों का प्रदर्शन किया गया तो आनंदविभोर श्रोताओं ने तालियों की गड़गड़ाहट से फिल्मांकन की सराहना की। निश्चय ही ये दोनों फिल्में भारत के इन दो महान वैज्ञानिक सपूतों के प्रति श्रद्धानत प्रशस्ति हैं।

निकट भविष्य में विज्ञान प्रसार इन दोनों फिल्मों को दूरदर्शन तथा अन्य टी.वी.चैनलों से प्रसारित करने की योजना बना रहा है। साथ ही स्कूलों और कालेजों में व्यापक प्रसार के लिए इन फिल्मों के सीडी तथा डीवीडी भी बनाए जाएंगे। हमें पूर्ण वि वास है कि फिल्मों के माध्यम से इन महान वैज्ञानिकों का जीवन युवा पीढ़ी को विज्ञान की चुनौतियों और रोमांच से सराबोर करते हुए प्रेरणा प्रदान करेगा।

• • •

अन्तर्राष्ट्रीय दूरस्थ शिक्षा सम्मेलन (आई सी डी ई)

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (इग्नू) ने अपने मैदानगढ़ी स्थित नवीन परिसर में 18–23 नवम्बर 2005 के दौरान दूरस्थ शिक्षा पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन किया। 'डिस्टेंस लर्निंग टेक्नोलोजी' (डीएलटी) पर चार सम्मेलन–पूर्व कार्यशालाएं तथा आईसीटी (इन्फोर्मेशन एण्ड कम्यूनीकेशन टेक्नोलोजी) आधारित शिक्षण पर समानान्तर अधिवेशन भी आयोजित किए गए। मानव संसाधन विकास मंत्री माननीय श्री अर्जुन सिंह ने इस सम्मेलन का उद्घाटन किया। सम्मेलन में कनाडा के इण्टरनेशनल रिसर्च डेवलपमेण्ट सेण्टर (आई डी आर सी) की एशिया में पैनडोरा (PANdora) डीएलटी पर चल रही शोध–कार्यक्रमों पर आधारित शोध प्रबंध प्रस्तुत किए गए। इनमें से एक कार्यक्रम में इग्नू के साथ विज्ञान प्रसार ने भी योग दिया है तथा इसमें अन्य प्रतिभागी संस्थाएं हैं – श्रीलंका की यूसीएससी एवं पाकिस्तान की एआईओयू। 'दक्षिण एशिया में आइसीटी आधारित ज्ञान–प्रौद्योगिकियां' नामक इस परियोजना की प्रगति पर विज्ञान प्रसार के निदेशक डॉ. वी.बी.काम्बले तथा इग्नू की ओर से डॉ. ज़ेबा खान ने व्याख्यान दिया। तीन राष्ट्रों की इस संयुक्त परियोजना में 'विज्ञान प्रसार' और 'इग्नू' ने भारत का प्रतिनिधित्व किया। इस परियोजना में पाकिस्तान का प्रतिनिधित्व वहां की अल्लामा इकबाल ओपन यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर नज़ीर सांगी ने किया। एक अधिवेशन में विज्ञान प्रसार द्वारा अपनाई गई डिस्टेंस लर्निग की प्रौद्योगिकियों के बारे में विज्ञान प्रसार के वैज्ञानिक–डी श्री रिंटू नाथ ने भी प्रस्तुति दी।

(बाएं से दाएं) डॉ. जेबा खान, डॉ. वी.बी.काम्बले प्रो. नज़ीर सांगी और प्रो. एस. के. पंडा

• • •